मूल्य: ₹30

आई.एस.ओ. 9001: 2015 संगठन

जनवरी–फरवरी 2020

भाकृअनुप
ICAR

फल फूल

वैज्ञानिक बागवानी की लोकप्रिय पत्रिका

www.icar.org.in

वैश्विक आलू कॉन्क्लेव 2020

आलू विशेषांक

वैश्विक आलू कॉन्क्लेव-2020

विश्व में आलू, उपभोग की दृष्टिकोण से तीसरी सबसे महत्वपूर्ण फसल के रूप में अपनी जगह बना चुका है। वर्तमान में विश्व के कुल आलू उत्पादन का 38 प्रतिशत हिस्सा भारत एवं चीन द्वारा उत्पादित हो रहा है। भारत में आलू के उत्पादन एवं विकास का श्रेय भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला द्वारा पिछले 70 वर्षों में किये गए अनुसंधान एवं तकनीकी हस्तानान्तरण को जाता है।

दूसरे आलू वैश्विक सम्मेलन के वर्ष 2008 में 34.7 मिलियन टन आलू का उत्पादन हुआ था। वर्तमान समय में यह उपज करीब 53 मिलियन टन तक पहुंच चुकी है। विगत एक दशक में 53 प्रतिशत की उत्पादन वृद्धि दर दर्शायी गई है। इसके अलावा 2050 तक इस क्षेत्र में करीब 3 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि दर अनुमानित है। भारत में लोगों के सामाजिक एवं आर्थिक स्तर में तेजी से बदलाव एवं खाद्य प्रणाली में निरंतर परिवर्तन होने के कारण आलू में अनुसंधान एवं विकास एक आवश्यकता बन गई है। बदलते वैश्विक परिदृश्य एवं जलवायु परिवर्तन के कारण अनुकूल तकनीकी का विकास एवं उनका सतत् प्रयोग आवश्यक है, जिससे उत्पादन एवं गुणवत्ता निरंतर बनी रह सके। यह सही समय है कि हम सभी हितधारकों की सक्रिय भागीदारी के साथ एक जीवंत रोड मैप तैयार करें, जो नीति निर्माताओं के लिए वांछित लक्ष्य प्राप्त करने में सुलभ हो और हमारे जनमानस के सपनों को साकार करे। इसलिए इस वैश्विक आलू का कॉन्क्लेव आयोजन, इस दिशा में प्रथम प्रयास है।

वैश्विक आलू कॉन्क्लेव-2020 हमारी उपलब्धियों को साझा करने और बेहतर दुनिया के लिए आलू के उज्ज्वल भविष्य पर विचार करने के लिए एक मंच प्रदान करेगा। वैश्विक आलू कॉन्क्लेव-2020 का आयोजन दिनांक 28 जनवरी से 31 जनवरी, 2020 को गुजरात की राजधानी गांधीनीगर में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (नई दिल्ली), केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान (शिमला) एवं भारतीय आलू संघ के नेतृत्व में किया जा रहा है। इस विशाल कार्यक्रम में तीन महत्वपूर्ण घटक हैं; आलू अनुसंधान पर सम्मेलन, कृषि एक्सपो एवं आलू क्षेत्र दिवस। इस दौरान शोधकर्ताओं, विद्यार्थियों एवं शिक्षाविदों को राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिकों के साथ संवाद करने का सुअवसर प्राप्त होगा। इतना ही नहीं व्यापार एवं उद्योग जगत से जुड़े लोगों को अपने उत्पादों, प्रौद्योगिकियों एवं उपकरणों आदि का प्रदर्शन करने के लिए अच्छा अवसर प्राप्त होगा। प्रक्षेत्र दिवस में किसानों के समक्ष नवीनतम तकनीकी जैसे-उन्नतशीत प्रजातियों, बीज उत्पादन तकनीक, मूल्य संवर्धन एवं कृषि यंत्रों का सजीव प्रदर्शन किया जाएगा।

इस विश्वास के साथ कि इस कॉन्क्लेव में करीब 10,000 प्रतिभागी भाग लेंगे, जिसमें शिक्षाविद, अनुसंधानकर्ता, शोध विद्यार्थी, व्यापारी एवं उद्यमी तथा प्रगतिशील प्रबुद्ध किसानों की सहभागिता अपेक्षित होगी। यह कॉन्क्लेव महात्मा मंदिर, गांधीनगर, गुजरात, भारत में आयोजित किया जा रहा है। यह बताने में मुझे प्रसन्नता हो रही है कि हमारे पहले परिपत्र ने दुनिया भर में आलू से जुड़े लोगों एवं संबंधित संगठनों तथा संस्थानों में अत्यधिक रुचि पैदा की। मैं आलू उत्पादकों, आलू अनुसंधानकर्ताओं, व्यापारियों और नीति निर्माताओं/निर्धारकों की सकारात्मक प्रतिक्रिया से अत्यधिक प्रोत्साहित और प्रेरित महसूस करता हूं।

इस कॉन्क्लेव-2020 के आयोजकों की ओर से आपको इस वैश्विक कार्यक्रम में भाग लेने एवं तीनों आयामों जैसे-कृषि, स्वास्थ्य एवं व्यवसाय के महत्व को जोड़ने के लिए सादर आमंत्रित करता हूं। आप इस विशाल आयोजन में अपने अग्रणी अनुसंधान पत्र, मौखिक एवं पोस्टर प्रस्तुति से योगदान कर सकते हैं। उद्योग जगत के लोग अपने उन्नतशील यंत्रों, उत्पादों एवं तकनीकों का प्रदर्शन कृषि एक्सपो में कर सकते हैं। प्रक्षेत्र दिवस में तकनीकी जैसे-उन्नतशील प्रजातियों, बीज तकनीकी, उन्नत यंत्रों एवं आलू के विभिन्न उत्पादों का सजीव प्रदर्शन उत्पादकों, किसानों एवं नीति निधारकों के मध्य किया जाएगा।

मुझे उम्मीद ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है कि इस कॉन्क्लेव में आपकी उपस्थिति आलू की भूमिका को वैश्विक स्तर पर प्रभावी बनाने के लिए एक व्यवस्थित रोडमैप तैयार करने में पूरी मदद करेगी।

स्वरूप कुमार चक्रबर्ती
निदेशक, भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान
शिमला-171002 (हिमाचल प्रदेश)

भाकृअनुप
ICAR

फल फूल

वैज्ञानिक बागवानी की
लोकप्रिय द्विमासिकी

वर्ष : 41, अंक : 1
जनवरी–फरवरी 2020

संपादन सलाहकार समिति

1. **डा. अशोक कुमार सिंह** — **अध्यक्ष**
   उप-महानिदेशक (कृषि विस्तार)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
2. **डा. सतेन्द्र कुमार सिंह** — **सदस्य**
   परियोजना निदेशक
   भाकृअनुप-कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
3. **डा. आर.सी. गौतम** — **सदस्य**
   पूर्व डीन
   भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
4. **डा. एस.के. सिंह** — **सदस्य**
   निदेशक
   भाकृअनुप-राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग नियोजन ब्यूरो, नागपुर
5. **डा. वाई.पी.एस. डबास** — **सदस्य**
   निदेशक (प्रसार)
   जी.बी. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय
   पंतनगर
6. **श्री सेठपाल सिंह** — **सदस्य**
   प्रगतिशील किसान
7. **श्री सुरेन्द्र प्रसाद सिंह** — **सदस्य**
   कृषि पत्रकार
8. **श्री अशोक सिंह** — **सदस्य सचिव**
   प्रभारी, हिन्दी संपादकीय एकक

संपादक : **अशोक सिंह**
संपादन सहयोग : **सुनीता अरोड़ा**

प्रधान प्रोडक्शन अधिकारी : **डा. वीरेन्द्र कुमार भारती**
स. मुख्य तकनीकी अधिकारी: **अशोक शास्त्री**

लेआउट डिजाइन
डा. वीरेन्द्र कुमार भारती
अशोक शास्त्री

व्यवसाय सम्पर्क सूत्र
सुनील कुमार जोशी
व्यवसाय प्रबंधक
दूरभाष: 011-25843657
E-mail: bmicar@icar.org.in
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा गेट, नई दिल्ली-12
एक प्रति: रु. 30.00 वार्षिक : रु. 150.00
E-mail : phalphul@gmail.com

विषय सूची

संपादकीय **महत्व वैश्विक आलू कॉन्क्लेव 2020 का**–अशोक सिंह

3 आवरण कथा

आलू उत्पादन एवं उपभोग राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य
आनंद कुमार सिंह, एस.के. चक्रबर्ती, विक्रमादित्य पाण्डेय और ब्रजेश कुमार पाण्डेय

10 सफलता

आलू की नई विकसित किस्में
सतीश कुमार लूथरा, विजय किशोर गुप्ता, विनोद कुमार, जागेश कुमार तिवारी, दलामु, विनय भारद्वाज, राज कुमार और शम्भू कुमार

14 विधि

परंपरागत तरीके से बीज आलू उत्पादन
अश्वनी कुमार शर्मा, राजेश कुमार सिंह, तनुजा बक्सेठ और राजकुमार

18 तकनीक

ऐरोपोनिक विधि से बीज आलू का उत्पादन
विनय सिंह, राजेश कुमार सिंह, सुखविन्दर सिंह, तनुजा बक्सेठ और जागेश कुमार तिवारी

20 नया आयाम

सत्य बीज आलू उत्पादन की उन्नत तकनीक
शैलेज सूद, सुन्दरेशा एस., विनय भारद्वाज, दलामू और हेमन्त कार्डीले

22 कृषि कार्यकलाप

आलू फसल की सस्य क्रियाएं
मनोज कुमार, जागेश कुमार तिवारी और राजेश कुमार सिंह

27 उपचार

आलू के प्रमुख विषाणुजनित रोग एवं निदान
रविन्द्र कुमार, राहुल कुमार तिवारी, संजीव शर्मा और एस.के. चक्रबर्ती

25 जल प्रबंधन

टपक सिंचाई विधि से आलू उत्पादन
नेमसिंह, एम.सी. सूद और कुसुम सिंह

31 रोकथाम
आलू में कवचधारी सूत्रकृमि का उन्मूलन
आरती बैरवा, संजीव शर्मा, वेंकटासलम ई.पी., प्रियंक हनुमान महात्रे, कैलाश चन्द्र नागा और सुभाष एस.

34 मूल्यवर्द्धन
आलू के नए प्रसंस्करित उत्पाद
अरविन्द जायसवाल, ब्रजेश सिंह, योगेश गुप्ता, पिंकी रायगोंड और स्वरूप कुमार चक्रबर्ती

39 संरक्षण
आलू भंडारण की विभिन्न विधियां
ब्रजेश सिंह, पिंकी रायगोंड, अरविंद जायसवाल, वंदना और एन. साइलो

41 स्वरोजगार
आलू खेती में उद्यम विकास की संभावनाएं
सुखविंदर सिंह, ब्रजेश नारे **और** अरविन्द जायसवाल

44 शोध
लाल कन्दीय आलू की नवीनतम उन्नत किस्में
शम्भू कुमार, जगेश कुमार तिवारी और राजेश कुमार सिंह

46 बचाव
आलू में खरपतवार प्रबंधन
शिव प्रताप सिंह, राजेश कुमार सिंह, संजय कुमार शर्मा, मुरलीधर जे. सदावर्ती, वी.के. दुआ, संजय रावल, श्याम कुमार गुप्ता और वाई.पी. सिंह

49 जरूरत
हवा को प्रदूषण मुक्त बनाने वाले पौधे

52 जानकारी
जनवरी-फरवरी में बागों की देखभाल
राम रोशन शर्मा, हरे कृष्णा, स्वाति शर्मा और विजय राकेश रेड्डी

56 जानकारी
सब्जियों के पौधे लगाने के हस्तचालित उपकरण
ए.पी. मगर, बी.बी. गायकवाड़, चेतन सावंत, स्वीटी कुमारी और अभिजीत खड़तकर

आवरण-II महत्व
वैश्विक आलू कॉन्क्लेव-2020

आवरण-III विशेष
आलू बिना सब सून

डिस्क्लेमर
लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं, उनसे भाकृअनुप की सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा अन्य सामग्री का कॉपीराइट अधिकार भाकृअनुप-डीकेएमए के पास सुरक्षित है। इन्हें पुन: प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की अनुमति अनिवार्य है। रसायनों-कीटनाशकों की डोज संबंधित संस्तुतियों का प्रयोग विशेषज्ञों से परामर्श के बाद करें।

संपादकीय

वैश्विक आलू कॉन्क्लेव 2020

महत्व वैश्विक आलू कॉन्क्लेव २०२० का

तीसरे वैश्विक आलू सम्मेलन 2020 (ग्लोबल पोटेटो कॉन्क्लेव 2020) का आयोजन 12 वर्षों बाद जनवरी 2020 में इंडियन पोटेटो एसोसिएशन तथा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद एवं भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला द्वारा संयुक्त रूप से गांधीनगर में किया जा रहा है। अनुमान है कि वैश्विक स्तर पर आलू से बने उत्पादों की मांग एवं जनसंख्या बढ़ोतरी को देखते हुए वर्ष 2050 तक आलू का उत्पादन 711.5 मिलियन टन (वर्ष 2014 में वैश्विक आलू उत्पादन 376.8 टन) तक होना चाहिए। इस प्रकार देखा जाए तो आगामी 20 वर्षों में लगभग 90 प्रतिशत तक आलू उपज में इजाफा करना होगा। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए आलू उत्पादन, अनुसंधान, प्रसंस्करण, व्यापार आदि क्षेत्रों में कार्यरत समस्त प्रोफेशनल्स को एक मंच पर लाने तथा इस क्षेत्र की चुनौतियों का सफलतापूर्वक सामना करने के लिए आपसी विमर्श से भावी रोडमैप विकसित करने के उद्देश्य से इस सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है।

यहां यह उल्लेख करना प्रासंगिक होगा कि वर्ष 2008 में आयोजित दूसरे वैश्विक आलू सम्मेलन के समय भारत में आलू उत्पादन 34.7 मिलियन टन था, जो कि वर्ष 2018 तक बढ़कर 53 मिलियन टन के स्तर पर जा पहुंचा है। निश्चित तौर पर यह उल्लेखनीय उपलब्धि कही जा सकती है। वर्तमान में चीन और भारत की संयुक्त रूप से विश्व के कुल आलू उत्पादन में लगभग 38 प्रतिशत की भागीदारी है। इसी प्रकार विश्व पटल पर आलू उपज में बढ़ोतरी के ट्रेण्ड पर नजर डालें तो पता चलता है कि वर्ष 1960 से वर्ष 2016 तक के इन छह दशकों के दौरान आलू क्षेत्रफल में आई कमी के बावजूद उत्पादन में 40 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इसमें आलू उत्पादकता में लगभग 60 प्रतिशत (12.2 टन/हैक्टर से 19.5 टन/हैक्टर) की बढ़ोतरी का महत्वपूर्ण योगदान है।

गेहूं और धान के बाद सर्वाधिक महत्वपूर्ण खाद्य फसल के तौर पर आलू अपनी पहचान दुनिया भर में बना चुका है। हाल के वर्षों में आलू के विविध प्रकार के प्रसंस्करित उत्पाद शोधकर्ताओं द्वारा तैयार किए गए हैं। आम लोगों के बीच में ये उत्पाद तेजी से लोकप्रिय हो रहे हैं। इसके अतिरिक्त अपने पौष्टिक गुणों के कारण भी आलू सर्वाधिक पसंद किए जाने वाले आहार के रूप में आज स्थापित हो चुका है। संभवत: यही कारण है कि आलू से तैयार किए जाने वाले उत्पादों की मांग वैश्विक स्तर पर जोर पकड़ रही है।

वैश्विक आलू कॉन्क्लेव 2020 के आयोजन के अवसर पर आपकी अपनी लोकप्रिय पत्रिका *'फल फूल'* का यह जनवरी-फरवरी 2020 अंक **'आलू विशेषांक'** के तौर पर प्रकाशित किया जा रहा है। सुधि पाठकों तक आलू उत्पादन, अनुसंधान एवं प्रसंस्करण के क्षेत्र की हाल की उपलब्धियों को पहुंचाने के साथ आने वाले समय में बढ़ती आलू की उपयोगिता पर भी प्रकाश डालने का प्रयास इस अंक में किया गया है। आलू आधारित उद्यम स्थापित करने के इच्छुक लोगों के लिए भी विशेषज्ञों द्वारा प्रस्तुत लेखों में उपयोगी एवं व्यावहारिक जानकारियां दी गई हैं।

आशा करते हैं कि आलू उत्पादन एवं प्रोसेसिंग के तमाम पहलुओं से जुड़ी जानकारियों को संजोने की दृष्टि से **'फल फूल'** का यह विशेषांक एक अनूठा प्रयास सिद्ध होगा

नव वर्ष 2020 की शुभकामनाओं सहित।

(अशोक सिंह)

आलू उत्पादन एवं उपभोग
राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य

आनंद कुमार सिंह*, **एस.के. चक्रबर्ती****, **विक्रमादित्य पाण्डेय***** और **ब्रजेश कुमार पाण्डेय*****

"विश्व स्तर पर खाद्य एवं पोषण सुरक्षा के दृष्टिकोण से आलू (*सोलेनम ट्यूबरोसम* एल.), गेहूं, मक्का एवं धान के बाद चौथी सबसे महत्वपूर्ण खाद्य फसल है। वर्तमान में खाद्य के रूप में उगाया जाने वाला आलू (वंश-सोलेनम), वानस्पतिक कुल-सोलेनेसी के अंतर्गत आता है, जिसकी लगभग 200 प्रजातियां, जंगली अथवा कृष्य अवस्था में पायी जाती हैं। इसकी उत्पत्ति, दक्षिण अमेरिका के एंडीज पर्वतश्रृंखला के क्षेत्रों में हुई मानी जाती है, जिसे 16वीं शताब्दी में स्पेन के नागरिकों द्वारा यूरोप लाया गया था। यहां पर यह शीतोष्ण फसल के रूप में स्थापित हो गया और कालांतर में विश्व के अन्य भू-भागों में औपनिवेशिक प्रसार के साथ विस्तारित हुआ। भारत में इसको 17वीं शताब्दी के आरंभिक काल में ब्रिटिश धर्मप्रचारक संस्थाओं एवं पुर्तगाली व्यापारियों द्वारा लाया गया।"

भारत में आलू शीत ऋतु की फसल है। इस फसल को वानस्पतिक वृद्धि, कंद बनने एवं पुष्पन के लिए तापमान एवं प्रकाशावधि की आवश्यकता होती है। यूरोपीय भौगोलिक दशाओं (ग्रीष्म ऋतु में औसतन 14 घंटे/प्रतिदिन और 140-180 दिनों की लंबी प्रकाशावधि) के विपरीत भारत में लगभग 85 प्रतिशत आलू लघु अवधि की मृदु शीत ऋतु (औसतन 10 से 11 घंटे/प्रतिदिन और 90-100 दिनों की लघु प्रकाशावधि) में उगाया जाता है। प्रातःकाल की बेला में कोहरा पड़ने से प्रकाशावधि में और कमी होती है, जिसका प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया एवं फसल उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। आलू के कंदों की खुदाई के तुरन्त बाद ग्रीष्म ऋतु की अवधि में भंडारण एवं खुदाई उपरांत कंदों की क्षति की प्रबल समस्या आ जाती है।

इन सभी समस्याओं के समाधान के लिए उपोष्ण कटिबंधीय भौगोलिक दशाओं के अनुकूल आलू की प्रजातियों एवं प्रभावी उत्पादन तकनीकों के विकास एवं प्रसार की आवश्यकताओं की आपूर्ति के लिए स्वदेशी

*उपमहानिदेशक (बागवानी), ***प्रधान वैज्ञानिक (बागवानी), बागवानी विज्ञान संभाग, भाकृअनुप-कृषि अनुसंधान भवन-II, पूसा, नई दिल्ली-110012; **निदेशक) भाकृअनुप-केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला (हिमाचल प्रदेश)

आलू उत्पादन परिदृश्य

आलू फसल पर हुए अनुसंधान एवं विकास प्रयासों के फलस्वरूप वर्ष 1949-50 से 2016-17 की अवधि में भारत में आलू के अंतर्गत क्षेत्रफल में 9.19 गुना, उत्पादन में 31.3 गुना एवं उत्पादकता में 3.14 गुना की वृद्धि हुई है। परिणामस्वरूप वर्ष 2017-18 की अवधि में 21,42,000 हैक्टर क्षेत्रफल से 5,13,10,000 मीट्रिक टन आलू की पैदावार हुई है। ऐसा अनुमान है कि वर्ष 2018-19 में 21,84,000 हैक्टर क्षेत्रफल से 5,25,89,000 मीट्रिक टन आलू की पैदावार हो सकती है। आलू उत्पादन व्यवसाय का देश की अर्थव्यवस्था में अनुमानित सकल योगदान 57,512 करोड़ रुपये प्रतिवर्ष है।

अनुसंधान एवं विकास की पहल के रूप में वर्ष 1949 में पटना (बिहार) में केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान संस्थान की स्थापना की गई। इसके मुख्यालय को बाद में शिमला (हिमाचल प्रदेश) में स्थानांतरित कर दिया गया।

इस अवधि में संस्थान द्वारा विकसित तकनीकों को स्थान विशेष की मृदा एवं जलवायुवीय दशाओं के अनुसार मानकीकृत करने के लिए ग्वालियर (मध्य प्रदेश), जालंधर (पंजाब), कुफरी (हिमाचल प्रदेश), मोदीपुरम (उत्तर प्रदेश), ऊटकमंडलम (तमिलनाडु), पटना (बिहार) एवं शिलांग (मेघालय) में सात आंचलिक केन्द्रों की स्थापना की गई। इन केन्द्रों द्वारा स्थान विशेष की आवश्यकताओं के अनुसार अनुसंधान, तकनीकी प्रसार, गुणवत्तायुक्त प्रजनक बीज उत्पादन एवं किसानों के प्रशिक्षण जैसे कार्यक्रम अनवरत रूप से चलाये जा रहे हैं।

आलू उत्पादन के लिए अनुकूल देश की

सारणी 1. देश में आलू अनुसंधान केन्द्र

1.	ओडिशा	भुबनेश्वर
2.	मध्य प्रदेश	ग्वालियर
3.	गुजरात	दीसा, बनासकांठा
4.	बिहार	ढोली
5.	उत्तर प्रदेश	अयोध्या, कानपुर
6.	कर्नाटक	हासन, धारवाड़
7.	हरियाणा	हिसार
8.	असोम	जोरहाट
9.	पश्चिम बंगाल	कल्याणी
10.	राजस्थान	कोटा
11.	उत्तराखंड	पंत नगर एवं रानी चौरी
12.	छत्तीसगढ़	रायपुर
13.	जम्मू एवं कश्मीर	श्रीनगर
14.	अरुणाचल प्रदेश	पासी घाट
15.	महाराष्ट्र	पुणे

इसके अतिरिक्त, संस्थान के सातों आंचलिक केन्द्रों पर भी इस परियोजना को चलाया जा रहा है।

आलू प्रक्षेत्र

सारणी 2. भारत में आलू के अंतर्गत क्षेत्रफल, उत्पादन एवं उत्पादकता

वर्ष	क्षेत्रफल (0, लाख हैक्टर)	उत्पादन (0, लाख मीट्रिक टन)	उत्पादकता (क्विंटल/हैक्टर)
1949-50	0.239	1.54	65.9
1959-60	0.362	2.73	75.5
1969-70	0.496	3.91	78.9
1979-80	0.685	8.33	121.5
1989-90	0.940	14.77	157.1
1999-00	1.340	24.71	184.4
2003-04	1.270	23.12	182.0
2005-06	1.400	23.90	170.6
2006-07	1.482	22.09	149.0
2007-08	1.553	28.47	183.3
2008-09	1.810	28.58	157.8
2009-10	1.840	36.58	199.2
2010-11	1.860	42.34	227.2
2011-12	1.910	41.48	217.5
2012-13	1.992	45.34	227.8
2013-14	1.97	41.5	211.0
2014-15	2.07	48.0	231.9
2015-16	2.11	43.4	205.7
2016-17	2.17	46.6	215.0
2017-18	2.14	51.31	239.8
2018-19*	2.18	52.59	241.2

*प्रथम अग्रिम अनुमान (बागवानी सांख्यिकी प्रभाग, कृषि, सहकारिता एवं किसान कल्याण विभाग, भारत सरकार)

आलू बीज

अधिकांश भौगोलिक भूभाग के लिए उपयोगी आलू की प्रजातियों के पहचान एवं समुचित उत्पादन तकनीकी के विकास एवं प्रसार के लिए वर्ष 1971 में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के तत्वावधान में अखिल भारतीय समन्वित कृषि अनुसंधान परियोजना का भाकृअनुप-केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला से शुभारंभ किया गया। यह परियोजना वर्तमान में देश के 19 केन्द्रों पर चलायी जा रही है (सारणी-1)

आलू फसल पर किए गए अनुसंधान, तकनीकी प्रसार एवं विकासपरक सरकारी योजनाओं का बहुत सार्थक परिणाम रहा है। इसके फलस्वरूप वर्ष 1949-50 (2.39 लाख हैक्टर से, 65.9 क्विंटल/हैक्टर उत्पादकता सहित 15.4 लाख मीट्रिक टन सकल उत्पादन) की तुलना में वर्ष 2017-18 की

बीज उत्पादन तकनीक

उपोष्ण जलवायु वाले मैदानी क्षेत्रों में कम माहूं कीट की अवधि की दशाओं में स्वस्थ 'बीज आलू' उत्पादन के लिए वर्ष 1970 में सीड प्लॉट तकनीक विकसित एवं मानकीकृत की गई थी। इस तकनीकी के साथ-साथ विषाणु नैदानिकी एवं विलोपन और सूक्ष्म प्रवर्धन (ऐरोपोनिक्स) जैसी अन्य नई अणु-जैविकी तकनीकों की सहायता से अखिल भारतीय स्तर पर राष्ट्रीय आलू बीज उत्पादन कार्यक्रम चलाया जा सका है। इससे वर्तमान अवधि में लगभग 2,600 मीट्रिक टन प्रतिवर्ष आलू के प्रजनक बीजों का उत्पादन किया जा रहा है, जिसके परिणामस्वरूप विभिन्न राज्यों के कृषि/बागवानी विभागों के सक्रिय योगदान से प्रतिवर्ष लगभग 4,32,000 मीट्रिक टन प्रमाणित आलू बीज का उत्पादन हो पाता है। इस अवधि में आलू बीज उत्पादन के अंतर्गत क्षेत्रफल में लगभग 12 गुना तक वृद्धि हुई है। अखिल भारतीय स्तर पर विभिन्न सस्य-जलवायुवीय दशाओं में समुचित दैह-कार्यिक अवस्था में स्वस्थ आलू बीजों की उपलब्धता सुनिश्चित करने में सहायता मिली है। वर्तमान समय में प्रमाणित आलू बीज उत्पादन का राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में योगदान लगभग 2000 करोड़ रुपये है। आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि अधिकांश एशियाई देश जैसे-पाकिस्तान, बांग्लादेश और यहां तक कि चीन अभी भी आलू बीज यूरोप से आयात करते हैं।

आलू के पौधों में पुष्पण की अवस्था

सारणी 3. भारत में राज्यानुसार आलू की उत्पादकता

क्र.सं.	राज्य/केन्द्र शासित प्रदेश	2015-16	2016-17	2017-18
1.	आंध्र प्रदेश	14.91	17.21	17.36
2.	अरुणाचल प्रदेश	7.44	-	-
3.	असोम	9.89	7.31	7.01
4.	बिहार	19.88	19.90	25.40
5.	छत्तीसगढ़	15.37	15.39	15.48
6.	गुजरात	31.58	31.00	28.56
7.	हरियाणा	24.91	25.98	25.85
8.	हिमाचल प्रदेश	10.17	9.60	12.51
9.	जम्मू एवं कश्मीर	18.42	22.28	21.32
10.	झारखंड	13.95	12.68	14.32
11.	कर्नाटक	13.74	15.69	14.34
12.	केरल	13.37	14.72	15.01
13.	मध्य प्रदेश	22.41	21.33	23.07
14.	महाराष्ट्र	20.12	25.79	23.38
15.	मेघालय	9.90	10.25	9.93
16.	मिजोरम	11.08	10.00	10.33
17.	नगालैंड	13.05	13.35	13.23
18.	ओडिशा	11.07	12.00	11.88
19.	पंजाब	25.83	24.83	26.10
20.	राजस्थान	16.05	16.12	20.15
21.	सिक्किम	4.89	4.89	4.70
22.	तमिलनाडु	18.14	14.38	19.30
23.	तेलंगाना	16.69	10.15	12.66
24.	त्रिपुरा	156.72	18.06	18.10
25.	उत्तर प्रदेश	22.81	25.30	25.30
26.	उत्तराखंड	13.84	13.84	13.76
27.	पश्चिम बंगाल	19.74	26.19	29.90
	अन्य	20.85	22.12	21.84
	कुल योग	20.51	22.30	23.96

स्रोत: बागवानी सांख्यिकी प्रभाग, कृषि एवं सहकारिता विभाग

अवधि में (21.4 लाख हैक्टर से, 241.2 क्विंटल/हैक्टर उत्पादकता सहित 513.1 लाख मीट्रिक टन सकल उत्पादन) आलू के अंतर्गत क्षेत्रफल, उत्पादकता और सकल उत्पादन में कीर्तिमान स्थापित हो सका है (सारणी-2)

आलू फसल के उत्पादन और उत्पादकता में स्थापित कीर्तिमान स्वदेश में ही विकसित तकनीकों से फसल उत्पादन का प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। आलू फसल पर पिछले दशकों में किए गए अनुसंधान एवं तकनीकी प्रसार की प्रमुख उपलब्धियां निम्नलिखित हैं:

उन्नतशील प्रजातियों का विकास

अब तक संस्थान द्वारा आलू की कुल 61 उन्नत प्रजातियों का विकास कर उन्हें किसानों द्वारा उगाये जाने के लिए संस्तुत किया गया है। इनमें खनिज तत्वों जैसे-जिंक, लौह तत्व एवं एंटी ऑक्सीडेंट से भरपूर 'कुफरी नीलकंठ' एवं 'कुफरी माणिक' नामक नूतन प्रजातियां भी सम्मिलित हैं।

उपरोक्त में से कई प्रजातियां कई रोगों एवं कीट-पतंगों, सूत्रकृमियों की प्रतिरोधी हैं। इसके अतिरिक्त नौ प्रजातियां यथा कुफरी चिप्सोना-1, कुफरी चिप्सोना-2, कुफरी चिप्सोना-3, कुफरी हिमसोना, कुफरी फ्राईसोना, कुफरी ज्योति, कुफरी चंद्रमुखी, कुफरी लवकार और कुफरी सूर्या प्रसंस्करण के लिए भी उपयोगी हैं। इन प्रजातियों को तीन परिपक्वता समूह जैसे-अग्रिम (70-80 दिन), मध्यम (90-100 दिन) और पछेती (110-120 दिन) में वर्गीकृत किया गया है।

आलू की बढ़ती मांग

भाकृअनुप-केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला द्वारा विकसित चार उन्नतशील प्रजातियों यथा कुफरी ज्योति, कुफरी बहार, कुफरी पुखराज एवं कुफरी चिप्सोना के अंतर्गत देश के सकल आलू उत्पादन का लगभग 75 प्रतिशत क्षेत्रफल आता है। संस्थान द्वारा समर्थित आलू उत्पादन व्यवसाय का देश की अर्थव्यवस्था में लगभग 54,636 करोड़ रुपये का योगदान है।

सारणी 4. विभिन्न देशों में बीज के अतिरिक्त आलू का निर्यात (ताजा/प्रशीतित)

राष्ट्र	2015-16		2016-17		2017-18	
	मात्रा	मूल्य	मात्रा	मूल्य	मात्रा	मूल्य
नेपाल	205358.39	20856.48	311212.48	49379.02	274153.75	20301.37
श्रीलंका	27279.06	5550.96	32277.86	5694.18	49066.07	7288.11
ओमन	9482.12	1848.32	16838.34	3276.78	19619.73	3258.59
मॉरीशस	10230.00	2185.48	7280.00	1764.74	8485.00	1859.86
इंडोनेशिया	0.00	0.00	453.00	109.42	7591.00	1711.02
मलेशिया	3401.00	722.02	6626.83	1339.09	8496.01	1651.08
कुवैत	6664.00	1114.07	7143.68	1478.50	7910.83	1393.92
मालदीव	5059.45	1399.80	5276.86	1265.86	5589.78	1127.86
संयुक्त अरब अमीरात	6203.60	1122.66	4875.58	891.02	5854.36	883.33
वियतनाम	0.00	0.00	230.00	42.28	2254.00	458.01
सेसलीज	1555.00	317.82	1436.00	232.91	1846.67	333.57
कतर	670.10	123.66	426.03	57.56	1696.17	319.53
हांगकांग	1194.00	298.36	1192.00	303.99	999.00	250.84
अन्य	2553.75	615.13	1072.01	221.16	2185.75	345.41
कुल योग	279650.47	36154.76	396340.67	66147.51	395748.12	41182.50

स्रोत : एपीईडीए वेबसाइट (11.9.2018)

संस्थान द्वारा विकसित प्रजातियां न केवल पड़ोसी देशों वरन सुदूर विदेशों में भी लोकप्रिय रूप से उगाई जा रही हैं जैसे कि कुफरी चंद्रमुखी अफगानिस्तान; में, कुफरी ज्योति नेपाल एवं भूटान में और कुफरी सिन्दूरी, बांग्लादेश तथा नेपाल में। इसके अतिरिक्त, पांच संकर प्रजातियों का व्यावसायिक स्तर पर श्रीलंका, मेडागास्कर, मेक्सिको और फिलीपींस में उत्पादन किया जा रहा है।

ऊतक संवर्धन तकनीक

गुणवत्तायुक्त प्रजनक आलू बीज उत्पादन के लिए अणु-जैविकी/ऊतक संवर्धन तकनीकों जैसे-विभाज्योतक संवर्धन एवं सूक्ष्म-प्रवर्धन जैसी तकनीकों के उपयोग के प्रयास किए गए हैं। इससे वर्तमान समय में सकल प्रजनक आलू बीज उत्पादन का लगभग 5 प्रतिशत इन तकनीकों से किया जा रहा है। भविष्य में इसके अंतर्गत शत-प्रतिशत प्रजनक आलू बीज उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है

सस्य-तकनीकें

आलू में कंद बनना आरंभ होते समय दिन का तापमान 30^0 सेल्सियस से कम एवं रात्रि का 20^0 सेल्सियस से कम होना उपयुक्त होता है। इसी अनुसार इसकी उत्पादन तकनीकों जैसे कि बीज की बुआई, उर्वरक एवं जल प्रबंधन, मिट्टी चढ़ाना, खरपतवार नियंत्रण इत्यादि का मानकीकरण एवं फसल प्रदर्शन किया गया है। जल एवं उर्वरक के समुचित प्रबंधन से कंद की सम्पूर्ण वृद्धि एवं

सारणी 5. विश्व के प्रमुख आलू उत्पादक देश

राष्ट्र	2002			2006			2012			2014			2016		
	उत्पादन (0, लाख मीट्रिक टन)	क्षेत्रफल (0, लाख हैक्टर)	उत्पादकता (मीट्रिक टन/ हैक्टर)	उत्पादन (0, लाख मीट्रिक टन)	क्षेत्रफल (0, लाख हैक्टर)	उत्पादकता (मीट्रिक टन/ हैक्टर)	उत्पादन (0, लाख मीट्रिक टन)	क्षेत्रफल (0, लाख हैक्टर)	उत्पादकता (मीट्रिक टन/ हैक्टर)	उत्पादन (0, लाख मीट्रिक टन)	क्षेत्रफल (0, लाख हैक्टर)	उत्पादकता (मीट्रिक टन/ हैक्टर)	उत्पादन (0, लाख मीट्रिक टन)	क्षेत्रफल (0, लाख हैक्टर)	उत्पादकता (मीट्रिक टन/ हैक्टर)
चीन	70.22	4.67	15.04	54.08	4.22	12.82	92.81	5.53	16.77	95.57	5.65	16.92	99.12	5.82	17.05
भारत	24.46	1.26	19.42	29.17	1.57	18.59	41.48	1.91	21.75	46.4	2.02	22.92	43.8	2.12	20.55
रूस गणराज्य	32.87	3.2	10.28	38.57	2.96	13.02	29.53	2.2	13.44	31.5	2.1	14.99	31.11	2.03	15.32
यूक्रेन	16.62	1.59	10.44	19.47	1.46	13.32	23.25	1.44	16.1	23.69	1.34	17.64	21.75	1.31	16.58
संयुक्त राज्य अमेरिका	20.78	0.51	40.57	19.99	0.45	44.09	20.99	0.46	45.82	20.06	0.43	47.15	19.99	0.41	49.02
जर्मनी	11.49	0.28	40.45	10.03	0.27	36.57	10.67	0.24	44.76	11.61	0.24	47.42	10.77	0.24	44.42
बांग्लादेश	2.99	0.24	12.6	5.37	0.37	14.38	8.21	0.43	19.06	8.95	0.46	19.38	9.47	0.48	19.92
पोलैंड	15.52	0.8	19.32	8.98	0.6	15.04	9.09	0.37	24.38	7.69	0.28	27.77	8.87	0.31	28.47
फ्रांस	6.87	0.16	42.38	6.36	0.16	40.19	6.34	0.15	41.11	8.09	0.17	47.98	6.83	0.18	39.01
नीदरलैंड	7.36	0.17	44.57	6.24	0.16	40.05	6.77	0.15	45.17	7.1	0.16	45.66	6.53	0.16	42.00
अन्य	107.24	6.29	17.06	109.09	6.2	17.6	121.46	6.49	18.7	121.09	6.25	19.37	118.65	5.62	21.10
सकल विश्व	316.4	19.17	16.51	307.4	18.42	16.69	370.6	19.38	19.12	381.7	19.1	19.11	377	19.25	19.58

स्रोत : खाद्य एवं कृषि संगठन (http://faostat3.fao.org/home/E) 21 जून, 2017

पत्तियों के सूखने की अवस्था में समुचित सामंजस्य स्थापित करने में सफलता प्राप्ति हुई है, जिससे उत्पादकता में आशातीत वृद्धि हो सकी है।

क्षेत्र-विशेष के लिए उपयोगी आलू फसल आधारित अंत:फसल एवं फसल चक्र प्रणालियां (गेहूं, सरसों, गन्ना इत्यादि) विकसित एवं प्रसारित की गई हैं। इससे मृदा उर्वरता तथा पोषक तत्व उपयोग दक्षता में आशातीत सुधार करने और सकल तथा आर्थिक उत्पादन बढ़ाने में सफलता मिली है। आलू उत्पादन में यंत्रीकरण करने में फसल प्रयोग हुए हैं, जिनके प्रेरणात्मक परिणाम प्राप्त हुए हैं।

फसल सुरक्षा

आलू फसल के प्रमुख रोगों जैसे-अगेती एवं पछेती झुलसा, मस्सा, पुटी (बलेज) सूत्रकृमि के प्रबंधन की फसल तकनीकें विकसित एवं प्रदर्शित की गई हैं। इनमें प्रतिरोधी प्रजातियों का विकास भी सम्मिलित है।

संस्थान द्वारा अखिल भारतीय स्तर पर प्रभावी पछेती झुलसा रोग के पूर्वानुमान की तकनीकी 'इंडो ब्लाइटकास्ट' विकसित एवं सफलतापूर्वक संचालित की गई है। इसके द्वारा अनुमानित 10 प्रतिशत कम फसल क्षति संभव हो सकी है। लगभग 70 करोड़ रुपये के कवकनाशियों के उपयोग में कमी हुई है एवं 414 करोड़ रुपये उत्पादन में वृद्धि से शुद्ध मुद्रा की बचत होती है।

भंडारण

भारत में सकल आलू उत्पादन का लगभग 85 प्रतिशत शीत ऋतु में होता, जिसके ग्रीष्म एवं वर्षा ऋतु में भंडारण की तकनीकें ($2-4^0$ सेल्सियस) विकसित एवं प्रदर्शित की गई हैं। आलू भंडारण की सस्ती,

पड़ोसी देशों की पसंद भारतीय आलू

सारणी 6. भारत के विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में उगाने के लिए उपयुक्त आलू की प्रमुख प्रजातियां

क्र. सं.	भौगोलिक क्षेत्र	उत्पादन की अवधि	बुआई का समय	प्रमुख प्रजातियां
1.	उत्तर-पश्चिमी मैदानी क्षेत्र	अग्रिम (<90 दिन)	सितंबर के अन्त और अक्टूबर के पहले सप्ताह से लेकर दिसम्बर के अन्त और जनवरी के पहले सप्ताह तक	कुफरी अशोक, कुफरी चन्द्रमुखी, कुफरी जवाहर, कुफरी पुखराज, कुफरी लीमा
2.		मध्यम (90 से 110 दिन	अक्टूबर के पहले सप्ताह से मध्य जनवरी तक	कुफरी आनंद, कुफरी अरुण, कुफरी बादशाह, कुफरी चिप्सोना-1, कुफरी चिप्सोना-2, कुफरी चिप्सोना-3, कुफरी पुखराज, कुफरी सदाबहार, कुफरी सतलज, कुफरी सूर्या, कुफरी बहार, कुफरी गरिमा, कुफरी पुष्कर, कुफरी ज्योति, कुफरी गौरव, कुफरी मोहन, कुफरी गंगा, कुफरी नीलकंठ
3.	पश्चिम-मध्य मैदानी क्षेत्र	अग्रिम (<90 दिन)	मध्य अक्टूबर से मध्य जनवरी तक	कुफरी चन्द्रमुखी, कुफरी जवाहर
4.		मध्यम (90 से 110 दिन	मध्य अक्टूबर से जनवरी के अन्त अथवा फरवरी के पहले सप्ताह तक	कुफरी आनंद, कुफरी अरुण, कुफरी बादशाह, कुफरी बहार, कुफरी चिप्सोना-1, कुफरी चिप्सोना-2, कुफरी चिप्सोना-3, कुफरी पुष्कर, कुफरी पुखराज, कुफरी सदाबहार, कुफरी सतलज, कुफरी सूर्या, कुफरी गरिमा, कुफरी सतलज, कुफरी सूर्या और कुफरी फ्राईसोना
5.		विलम्ब (<110 दिन	मध्य अक्टूबर से मध्य फरवरी तक	कुफरी सिन्दूरी
6.	उत्तर-पूर्वी मैदानी क्षेत्र	अग्रिम (<90 दिन)	अक्टूबर के अंतिम सप्ताह और मध्य नवंबर से लेकर जनवरी के अन्त मध्य फरवरी तक	कुफरी अशोक, कुफरी चन्द्रमुखी
7.		मध्यम (90 से 110 दिन	अक्टूबर के अंतिम सप्ताह और मध्य नवंबर से लेकर मध्य फरवरी अथवा फरवरी के अंतिम सप्ताह तक	कुफरी अरुण, कुफरी चिप्सोना-1, कुफरी चिप्सोना-2, कुफरी चिप्सोना-3, कुफरी लालिमा, कुफरी पुखराज, कुफरी गरिमा, कुफरी पुष्कर, कुफरी सदाबहार, कुफरी सतलज, कुफरी सूर्या, कुफरी ज्योति, कुफरी गौरव, कुफरी बहार, कुफरी कंचन, कुफरी ललित, कुफरी मोहन
8.		विलम्ब (<110 दिन	अक्टूबर के अंतिम सप्ताह और मध्य नवंबर से लेकर फरवरी के अन्त तक	कुफरी सिन्दूरी
9.	पठारी क्षेत्र	अग्रिम (<90 दिन)	**खरीफः** जून-जुलाई से सितंबर-अक्टूबर **रबीः** नवंबर से जनवरी	कुफरी चन्द्रमुखी, कुफरी जवाहर, कुफरी लवकार
10.		मध्यम (90 से 110 दिन	**खरीफः** जून-जुलाई से सितंबर-अक्टूबर **रबीः** नवंबर से फरवरी	कुफरी पुखराज, कुफरी बादशाह, कुफरी सूर्या, कुफरी ज्योति, कुफरी गरिमा

सारणी 7. भारत के कुछ प्रमुख राज्यों में आलू उत्पादक क्षेत्र

क्र.सं.	राज्य	प्रमुख क्षेत्र
1	उत्तर प्रदेश	आगरा, हाथरस, फिरोजाबाद, कन्नौज, फर्रुखाबाद इत्यादि
2	पश्चिम बंगाल	हुगली, पश्चिम मिदनापुर, बर्दवान, जलपाईगुड़ी, बांकुड़ा इत्यादि
3	बिहार	नालन्दा, पटना, वैशाली, सारण, मुजफ्फरपुर इत्यादि
4	गुजरात	बनासकांठा, अरावली, साबरकांठा, गांधीनगर, मेहसाना इत्यादि
5	मध्य प्रदेश	इंदौर, शाजापुर, उज्जैन, छिंदवाड़ा, देवास इत्यादि

सुगम एवं देसी (बिना-प्रशीतित) तकनीकों का अध्ययन, मानकीकरण एवं समुचित संस्तुति की गई है। रसायन सी आईपीसी (आइसोप्रोपाइल-एन-क्लोरोफेनाइल कार्बामेट) का प्रयोग (25 मि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति किग्रा. कंद) कंदों के अंकुरण रोकने में सहायक होता है।

इस संस्थान द्वारा विकसित भंडारण तकनीकी द्वारा अनुमानतः 14 करोड़ 10 लाख किलो वाट विद्युत ऊर्जा की भी बचत होती है।

प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन

आलू को सीधे आहार रूप में खाने के अतिरिक्त, विभिन्न प्रकार के उत्पादों के रूप में प्रसंस्करित भी किया जा सकता है। इसके लिए प्रसंस्करण तकनीकें (चिप्स, फ्रेंच फ्राईज एवं डिब्बा बंद इत्यादि) तथा प्रजातियों का फसल विकास किया गया है। कुफरी चिप्सोना-1, कुफरी चिप्सोना-2, कुफरी चिप्सोना-3, कुफरी ज्योति, कुफरी चन्द्रमुखी, कुफरी लवकार, कुफरी सूर्या,

अर्थव्यवस्था में आलू बीज का बड़ा योगदान

सारणी 8. भारत में आलू की बुआई एवं कन्दों की खुदाई का समय

मैदानी क्षेत्र	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितंबर	अक्टूबर	नवंबर	दिसंबर	जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल
उत्तर प्रदेश						बुआई	बुआई	खुदाई	खुदाई	खुदाई	खुदाई	
पश्चिम बंगाल						बुआई	बुआई	बुआई	खुदाई	खुदाई	खुदाई	
बिहार							बुआई	बुआई	खुदाई	खुदाई	खुदाई	
पंजाब				बुआई	बुआई	बुआई	खुदाई	खुदाई	खुदाई	खुदाई		
कर्नाटक	बुआई	बुआई	बुआई	खुदाई	खुदाई	खुदाई						

पर्वतीय क्षेत्र	अगस्त	सितंबर	अक्टूबर	नवंबर	दिसंबर	जनवरी	फरवरी	मार्च
उत्तराखंड एवं हिमाचल प्रदेश	बुआई	बुआई	खुदाई	खुदाई	खुदाई			
गुजरात			बुआई	बुआई	बुआई	खुदाई	खुदाई	खुदाई

बुआई (हरा) कंदों की खुदाई (लाल)

- 85-90 प्रतिशत आलू का उत्पादन शीत ऋतु (रबी) में होता है।
- वर्षा ऋतु में आलू उत्पादन (खरीफ) कर्नाटक, महाराष्ट्र, हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड में होता है।

आलू, एक खाद्य फसल के रूप में

आलू एकवर्षीय, शाकाहारी, द्विबीजपत्री कायिक प्रवर्धन वाली फसल है। इसका प्रवर्धन, वानस्पतिक रूप से सत्य बीज (ट्रू पोटेटो सीड-टीपीएस) के द्वारा भी किया जाता है। आलू का कंद एक तरह से रूपांतरित तना होता है। इसमें वास्तविक तने के सभी लक्षण होते हैं जैसे-कलिका एवं पपड़ीदार पत्तियां का पाया जाना।

आलू के कंद प्रमुख पोषक तत्वों से भरपूर एवं सुपाच्य होते हैं, जिसमें औसतन 80 प्रतिशत जलांश एवं 20 प्रतिशत शुष्कांश होता है। शुष्कांश में मांड (14 प्रतिशत), शर्करा (2 प्रतिशत), प्रोटीन (2 प्रतिशत), खनिज तत्व (1 प्रतिशत), रेशा (0.6 प्रतिशत), वसा (0.1 प्रतिशत) और सीमित मात्रा में विटामिन 'बी' एवं 'सी' पाया जाता है। अन्य फसलों की तुलना में आलू शीघ्र परिपक्व होने वाली फसल है, इसलिए भविष्य में भारत में कृषि योग्य भूमि की सीमित उपलब्धता और सतत रूप में बढ़ती हुई जनसंख्या की खाद्य एवं पोषण सुरक्षा को सुरक्षित करने की चुनौतियों के सुगम समाधान के लिए आलू का समुचित उत्पादन एवं उपभोग, महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर सकता है। इसके अतिरिक्त देश में आलू का अधिक उत्पादन एवं उपभोग कई अन्य कृषिजन्य फसलों के उपभोग एवं परिणामस्वरूप निर्यात को अनुकूल रूप में बढ़ावा देने में सार्थक भूमिका निभा सकता है।

कुफरी हिमसोना और कुफरी फ्राईसोना जैसी प्रजातियां प्रसंस्करण के लिए उपयुक्त हैं।

कंप्यूटर तकनीकी का प्रयोग

विभिन्न भौगोलिक दशाओं में फसल फसलोत्पादन में सहायक कंप्यूटर तकनीकें जैसे इन्फोकार्प-पोटेटो तथा पोटेटो पेस्ट मैनेजर विकसित कर उपयोग में लाने के लिए संस्तुत की गई हैं।

तकनीकों का फसल प्रदर्शन एवं प्रसार

आलू उत्पादन एवं व्यवसाय से संबंधित तकनीकी ज्ञान को विभिन्न माध्यमों जैसे-आकाशवाणी, दूरदर्शन, लोकप्रिय पत्रिकाओं, सम-सामयिक लेखों/सुझावों, आदिवासी उप-परियोजना, पूर्वोत्तर पर्वतीय क्षेत्र उप-परियोजना इत्यादि के माध्यमों से प्रचार एवं प्रसार किया जा रहा है।

निर्यात

यद्यपि विश्व आलू उत्पादन में भारत का योगदान केवल 7.55 प्रतिशत है, परंतु निर्यात केवल 0.7 प्रतिशत है। भारतीय आलू तुलनात्मक रूप में अधिक गुणवत्तायुक्त होता है, जिसको जनवरी से जून की अवधि में यूरोप को निर्यात किया जा सकता है। कम उत्पादन लागत की स्थिति में भारत से आलू निर्यात की असीमित संभावनाएं हैं

भविष्य में आलू उत्पादन एवं उपभोग की सार्थकता

भविष्य में खाद्यान्न की अपेक्षा सब्जियों का अधिक उपभोग आलू की मांग में आशातीत वृद्धि में सहायक होगा। इसकी आपूर्ति को सुनिश्चित करने के लिये अनुसंधान एवं विकास पर और ध्यान देने की आवश्यकता होगी। कई यूरोपीय देशों एवं संयुक्त राज्य अमेरिका में आलू की अधिक उत्पादकता (39-49 मीट्रिक टन/हैक्टर), भारत (21 मीट्रिक टन/हैक्टर) से बहुत अधिक है। इस लक्ष्य को समुचित वैज्ञानिक अनुसंधान से प्राप्त करने पर ध्यान देने की जरूरत है।

आलू की नई विकसित किस्में

सतीश कुमार लूथरा*, विजय किशोर गुप्ता*, विनोद कुमार*, जागेश कुमार तिवारी, दलामु**, विनय भारद्वाज*, राज कुमार* और शम्भू कुमार***

वैश्विक आलू कॉन्क्लेव 2020

आलू का उद्‌गम स्थल दक्षिणी अमेरिका के पेरू एवं बोलिविया के पास लेक टिटिकाका के समीप एंडीज पर्वत में माना जाता है। सोलहवीं शताब्दी में आलू, यूरोप पहुंचा और वहां से आलू का प्रसार विश्वभर में हुआ। भारत में आलू का आगमन संभवत: 17वीं शताब्दी के शुरू में पुर्तगाली व्यापारियों द्वारा लायी गयी किस्मों के साथ हुआ, लेकिन आयातित किस्में भारत में सफल नहीं हो पायीं। यह निर्णय लिया गया कि देश में आयातित किस्मों पर निर्भर रहना ठीक नहीं है। देश में आलू की नई किस्मों का प्रजनन कार्यक्रम 1935 में तत्कालीन इंपीरियल और अब भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के आलू प्रजनन केन्द्र, शिमला में शुरू किया गया। खाद्य उत्पादों में आलू के महत्व को देखते हुए भारत में एक स्वतंत्र आलू अनुसंधान संस्थान स्थापित करने की आवश्यकता महसूस हुई। इसके फलस्वरूप वर्ष 1949 में केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान की स्थापना पटना (बिहार) में की गयी। बाद में वर्ष 1956 में संस्थान का मुख्यालय शिमला (हिमाचल प्रदेश) में स्थानांतरित हो गया।

केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान द्वारा वर्ष 1958 से देश के विभिन्न कृषि जलवायु क्षेत्रों, फसलचक्र प्रणालियों तथा रोग व कीट प्रतिरोधिता के लिए आलू की सुधरी किस्में विकसित कर जारी की जा रही हैं। संस्थान द्वारा अब तक 66 उन्नतशील किस्मों का विकास किया गया है। सबसे पहले आलू की कुफरी सफेद व कुफरी रेड नामक की दो किस्मों को क्रमश: आलू की फुलवा तथा दार्जलिंग रेड राउंड नामक देसी किस्मों के क्लोन चयन द्वारा तैयार किया गया। संस्थान द्वारा जारी शेष 64 किस्में संकर हैं। संस्थान द्वारा जारी 66 किस्मों में से 57 किस्मों के कंदों का रंग सफेद या हल्का पीला है, जबकि पूर्वी मैदानी इलाकों के उपभोक्ताओं की लाल कंद वाली किस्मों के प्रति पसंद को देखते हुए लाल रंग के कंदों वाली आठ किस्मों का भी विकास किया गया है। इसकी खेती से सफेद आलू की तुलना में किसानों को बाजार से अधिक कीमत प्राप्त होती है। संस्थान द्वारा बैंगनी रंग के कंदों वाली अधिक पोषण प्रदान करने वाली किस्म कुफरी नीलकंठ को भी खेती करने के लिए जारी किया गया है। संस्थान द्वारा आलू के प्रसंस्करण पर ध्यान देते हुए 8 किस्मों का विकास मुख्य रूप से चिप्स व फ्रेंच फ्राइज बनाने के लिए किया गया है। कुफरी सूर्या एवं कुफरी लीमा किस्मों को उच्च तापमान वाले इलाकों में उगाकर अच्छा मुनाफा कमाया जा सकता है। आलू के अधिक उत्पादन के लिए सही किस्म का चुनाव महत्वपूर्ण है। इसके लिए आलू उत्पादकों को निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए:

*केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान परिसर, मोदीपुरम, मेरठ-250110 (उत्तर प्रदेश)

कुफरी नीलकंठ

- किस्म क्षेत्र विशेष के लिए उपयुक्त हो।
- कम समय में तैयार होने वाली हो या शीघ्र कंद बनाने की क्षमता रखती हो।
- अधिक उत्पादन देने की क्षमता हो।
- झुलसा रोग प्रतिरोधी हो।
- सामान्य विषाणु प्रतिरोधक क्षमता वाली हो, जिससे बीज स्टाक की गुणवत्ता लंबे समय तक सुरक्षित रखी जा सके।
- उच्च तापमान व पाले को सहने की क्षमता हो।
- अच्छी भंडारण क्षमता वाली हो।
- प्रसंस्करण के लिए किस्म में अधिक सूखा तत्व ($\geq$ 20 प्रतिशत), कम अवकारक शर्करा ($\leq$ 150 मि.ग्रा. /100 ग्राम ताजा आलू) तथा तलने पर सुन्दर हल्के रंग की चिप्स व फ्रेंच फ्राइज प्रदान करने जैसे गुणों का समावेश हो।

इस प्रकार यदि उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखकर हमारे किसान भाई खेती करें तो निश्चित तौर पर उन्हें अच्छी उपज प्राप्त होगी तथा वे अधिक लाभ भी कमा सकते हैं।

आलू की चिप्स वाली किस्में

कुफरी चिप्सोना-3

इस किस्म के कंद सफेद-क्रीमी, अंडाकार, सतही आंखों वाले तथा गूदा सफेद होता है। फसल 110-120 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी पैदावार लगभग 300 से 350 क्विंटल प्रति हैक्टर तक है। यह किस्म पिछेता झुलसा रोग प्रतिरोधी है। इसकी भंडारण क्षमता अच्छी है। इस किस्म के कंदों में अवकारक शर्करा 10-100 मि.ग्रा. प्रति 100 ग्राम ताजा आलू और शुष्क पदार्थ की मात्रा 20-23 प्रतिशत तक होती है। इस किस्म के कंद चिप्स बनाने के लिए उपयुक्त हैं।

कुफरी चिप्सोना-3

कुफरी हिमसोना

इस किस्म के कंद सफेद-क्रीमी, गोल-अंडाकार, सतही आंखों वाले तथा गूदा क्रीमी होता है। फसल 120-130 दिनों में तैयार हो जाती है। यह किस्म देश के पहाड़ी क्षेत्रों में लगभग 15-20 क्विंटल प्रति हैक्टर पैदावार देती है। मैदानी क्षेत्रों में इस किस्म से लगभग 300-350 क्विंटल उपज प्राप्त की जा सकती है। इसके कंदों में अवकारक शर्करा 10-80 मि.ग्रा. प्रति 100 ग्राम ताजा आलू और शुष्क पदार्थ की मात्रा 21-24 प्रतिशत तक होती है। यह किस्म पिछेता झुलसा रोग की मध्यम प्रतिरोधी है। इसकी भंडारण क्षमता अच्छी है। इस किस्म के कंद चिप्स तथा लच्छा बनाने के लिए उपयुक्त हैं।

कुफरी चिप्सोना-4

इस किस्म के कंद सफेद-क्रीमी, गोल-अंडाकार, सतही आंखों वाले तथा गूदा सफेद होता है। फसल 100-110 दिनों में तैयार हो जाती है। यह कर्नाटक में खरीफ की फसल के दौरान लगभग 180-220 क्विंटल प्रति हैक्टर उपज और देश के मैदानी इलाकों में रबी फसल में लगभग 300-350 क्विंटल प्रति हैक्टर उपज देती है। यह अपने गोल-अंडाकार कंद, शुष्क पदार्थ की मात्रा (20 प्रतिशत से अधिक) और कम अवकारक शर्करा (40-80 मि.ग्रा. प्रति 100 ग्राम ताजा आलू) के कारण चिप्स बनाने के लिए उपयुक्त है। यह कर्नाटक, पश्चिम बंगाल व मध्य प्रदेश के लिए उपयुक्त किस्म है, जहां प्रसंस्करण के लिए उच्च कंद उपज और उच्च स्तर की पिछेता झुलसा रोग प्रतिरोधिता के संयोजन की आवश्यकता होती है। अच्छी भंडारण क्षमता से इस किस्म को लंबी अवधि के लिए रखने में मदद मिलती है और इस तरह कच्चे माल की वर्षभर उपलब्धता सुनिश्चित की जा सकती है।

आलू की सफेद या पीले रंग वाली किस्में

कुफरी पुष्कर

इस किस्म के कंद पीले, अंडाकार, मध्यम-गहरी आंखों वाले तथा गूदा क्रीमी होता है। यह मध्यम अवधि वाली किस्म है। यह किस्म लगभग 90 से 100 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी उपज क्षमता 300 से 350 क्विंटल प्रति हैक्टर है। यह किस्म पिछेता झुलसा रोग प्रतिरोधी है। इस किस्म में शुष्क पदार्थ की मात्रा 17-18 प्रतिशत होती है। इसकी भंडारण क्षमता उच्च कोटि की है।

कुफरी सदाबहार

इस किस्म के कंद सफेद, आकर्षक, अंडाकार, सतही आंखों वाले व गूदा सफेद होता है। यह मध्यम अवधि वाली किस्म है और फसल 80 से 90 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी पैदावार 300 से 350 क्विंटल प्रति हैक्टर है। यह पिछेता झुलसा रोग की मध्यम प्रतिरोधी है। इस किस्म में कंद बनने की प्रक्रिया जल्दी शुरू होती है। इस किस्म में शुष्क पदार्थ की मात्रा 18-19 प्रतिशत होती है और इसकी भंडारण क्षमता अच्छी है। इसे नवंबर के पहले सप्ताह में लगाकर अच्छा मुनाफा कमाया जा सकता है।

कुफरी गरिमा

इसके कंद हल्के पीले आकर्षक, अंडाकार, सतही आंखों वाले तथा गूदा हल्का पीला होता है। यह मध्यम अवधि वाली किस्म है। फसल 80 से 90 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी पैदावार 300 से 350 क्विंटल प्रति हैक्टर है। यह किस्म झुलसा रोग की प्रतिरोधी है। इस किस्म में शुष्क पदार्थ की मात्रा 18-19 प्रतिशत होती है व इसकी भंडारण क्षमता अच्छी है।

कुफरी गरिमा

कुफरी गौरव

इस किस्म के कंद सफेद-क्रीमी, अंडाकार, मध्यम गहरी आंखों वाले तथा गूदा सफेद-क्रीमी होता है। यह मध्यम अवधि वाली

किस्म है। इसकी फसल 90 से 100 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी पैदावार 300 से 350 क्विंटल प्रति हैक्टर है। यह किस्म अन्य किस्मों की तुलना में पोषक तत्वों (नाइट्रोजन) का कम अवशोषण करती है। इसमें शुष्क पदार्थ की मात्रा 16-17 प्रतिशत होती है व इसकी भंडारण क्षमता अच्छी है।

कुफरी मोहन

यह किस्म मैदानी क्षेत्रों में मुख्य फसल के रूप में लगाने के लिए उपयुक्त है। इस किस्म के कंद सुन्दर सफेद, अंडाकार, उथली आंखें व गूदा सफेद होता है। यह मध्यम अवधि वाली किस्म है। यह फसल 90 से 100 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी पैदावार 350 से 400 क्विंटल प्रति हैक्टर है। इसमें पिछेता झुलसा रोग के प्रति मध्यम प्रतिरोधकता है। इस किस्म में शुष्क पदार्थ की मात्रा 15-18 प्रतिशत होती है और इसकी भंडारण क्षमता अच्छी है।

कुफरी गंगा

यह किस्म मैदानी क्षेत्रों में मुख्य फसल के रूप में लगाने के लिए उपयुक्त है। इसके कंद सुन्दर सफेद-क्रीमी, अंडाकार, उथली आंखें व गूदा क्रीमी होता है। यह मध्यम अवधि वाली किस्म है। इस किस्म से लगभग 350 से 400 क्विंटल प्रति हैक्टर तक उपज प्राप्त की जा सकती है। इसमें शुष्क पदार्थ की मात्रा 16-18 प्रतिशत तक होती है। यह कम पानी में भी अन्य किस्मों के मुकाबले अधिक उत्पादन देने में समर्थ है। इसमें पिछेता झुलसा रोग के प्रति मध्यम प्रतिरोधकता है और इसकी भंडारण क्षमता अच्छी है।

कुफरी लीलिमा

यह किस्म मैदानी क्षेत्रों में अगेती फसल में लगाने के लिए उपयुक्त है। इसमें अधिक तापमान के साथ-साथ हॉपर और माइट कीटों के प्रति सहनशीलता भी है। इसके कंद सुन्दर सफेद-क्रीमी, अंडाकार, उथली आंखें और गूदा क्रीमी होता है। इस किस्म को मुख्य फसल से 15-20 दिनों पहले लगाकर लगभग 300 से 350 क्विंटल प्रति हैक्टर तक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। मध्य सितंबर में लगाई अगेती फसल से लगभग 150-200 क्विंटल उपज प्राप्त की जा सकती है। अगेती आलू फसल के ताजा उत्पाद की सर्दियों के त्योहारी दिनों में अच्छी मांग के कारण मुनाफा भी अधिक मिलता है। इस किस्म में शुष्क पदार्थ की मात्रा 18-19 प्रतिशत होती है। इसकी भंडारण क्षमता अच्छी है।

कुफरी अरुण

इसके कंद लाल, अंडाकार, मध्यम-गहरी आंखों वाले तथा गूदा क्रीमी होता है। यह मध्यम अवधि वाली किस्म है। इसकी फसल 80 से 90 दिनों में तैयार हो जाती है। यह किस्म पिछेता झुलसा रोग के प्रति मध्यम प्रतिरोधी है। इसकी पैदावार 300 से 350 क्विंटल प्रति हैक्टर है। इसकी भंडारण क्षमता सामान्य है।

कुफरी अरुण

कुफरी नीलकंठ

यह मैदानी इलाकों में मुख्य फसल में लगाने के लिए भोज्य आलू की विशेष किस्म है। इसके कंद सुन्दर बैंगनी, अंडाकार, उथली आंखें व गूदा पीला होता है। सेहत की दृष्टिकोण से इस किस्म में एंटीऑक्सीडेंट (एनथो-सायनीन व करोटीनोइड्स) की मात्रा अन्य लाल रंग वाली किस्मों से अधिक है। यह मध्यम अवधि वाली किस्म है। इस किस्म से लगभग 350 से 380 क्विंटल प्रति हैक्टर तक उपज प्राप्त की जा सकती है। इस किस्म में शुष्क पदार्थ की मात्रा 17-18 प्रतिशत तक होती है। इसमें पिछेता झुलसा रोग के प्रति मध्यम प्रतिरोधिता है और इसकी भंडारण क्षमता भी अच्छी है।

कुफरी माणिक

यह किस्म पूर्वी मैदानी इलाकों में उगाने के लिए उपयुक्त है। इस किस्म के कंद लाल, गोल, मध्यम-गहरी आंखों वाले तथा गूदा पीला होता है। यह मध्यम अवधि वाली किस्म है। इसकी फसल 90 से 100 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी उपज क्षमता लगभग 250 से 300 क्विंटल प्रति हैक्टर है। इसकी भंडारण क्षमता अच्छी है। शुष्क पदार्थ की मात्रा 19 प्रतिशत होती है। यह किस्म झुलसा रोग की प्रतिरोधी है।

कुफरी शैलजा

इस किस्म के कंद सफेद-क्रीमी, अंडाकार, उथली आंखें और गूदा सफेद होता है। यह मध्यम अवधि वाली किस्म है। फसल 100 से 120 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी पैदावार लगभग 300 से 350 क्विंटल प्रति हैक्टर है। यह पिछेता झुलसा रोग से मध्यम प्रतिरोधी है। इसमें शुष्क पदार्थ की मात्रा 18-19 प्रतिशत होती है। इसकी भंडारण क्षमता औसत है। यह किस्म उत्तर

कुफरी ख्याति

इस किस्म के कंद सफेद-क्रीमी, अंडाकार, मध्यम-गहरी आंखों वाले तथा गूदा क्रीमी होता है। यह अगेती-मध्यम अवधि वाली किस्म है। यह लगभग 70 से 90 दिनों में तैयार हो जाती है। अगेती खुदाई वाली फसल के रूप में इसकी पैदावार क्षमता 250 से 300 क्विंटल प्रति हैक्टर है। मुख्य फसल से इस किस्म की पैदावार 350 से 400 क्विंटल/हैक्टर तक ली जा सकती है। यह किस्म अगेती और पिछेता झुलसा की प्रतिरोधी है। इस किस्म में आलू बनने की प्रक्रिया जल्दी शुरू होती है। इस किस्म में शुष्क पदार्थ की मात्रा 16-17 प्रतिशत होती है और इसकी भंडारण क्षमता अच्छी है।

कुफरी सूर्या

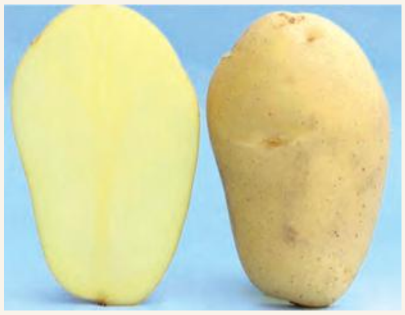

इस किस्म के कंद पीले, लंबे अंडाकार, सतही आंखों वाले व गूदा पीला होता है। फसल 70 से 90 दिनों में तैयार हो जाती है। मध्य सितंबर में लगाई अगेती फसल से लगभग 150-200 क्विंटल उपज प्राप्त की जा सकती है, जबकि अक्टूबर के पहले सप्ताह में इसकी पैदावार 250 से 300 क्विंटल प्रति हैक्टर है। यह किस्म पिछेता झुलसा से सुग्राही है। यह मैदानी क्षेत्रों में अगेती फसल में लगाने के लिए उपयुक्त है। इसमें अधिक तापमान के साथ-साथ हॉपर व माईट कीटों के प्रति सहनशीलता भी है। इस किस्म में शुष्क पदार्थ की मात्रा 18-19 प्रतिशत होती है व इसकी भंडारण क्षमता उच्च कोटि की है।

कुफरी नीलिमा

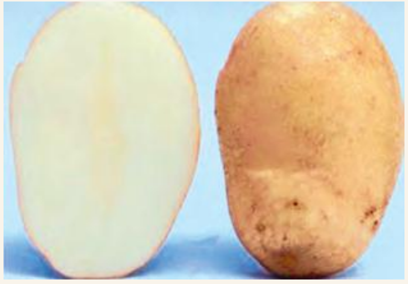

इस किस्म के कंद सफेद, अंडाकार, उथली आंखें व गूदा सफेद होता है। यह मध्यम अवधि वाली किस्म है। फसल 100 से 120 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी पैदावार लगभग 250 से 300 क्विंटल प्रति हैक्टर है। इसमें पिछेता झुलसा रोग की प्रतिरोधकता है। यह किस्म सिस्ट निमेटोड की भी अधिक प्रतिरोधी है। इसमें शुष्क पदार्थ की मात्रा 18-19 प्रतिशत तक होती है। इसकी भंडारण क्षमता अच्छी है। यह किस्म नीलगिरी पहाड़ियों में खेती के लिए उपयुक्त है।

भारत के पहाड़ी इलाकों में खेती के लिए उपयुक्त है।

कुफरी गिरधारी

इस किस्म के कंद सफेद-क्रीमी, अंडाकार, उथली आंखें व गूदा सफेद होता है। यह मध्यम से पिछेती अवधि वाली किस्म है। फसल 110 से 130 दिनों में तैयार हो

कुफरी हिमालिनी

इस किस्म के कंद सफेद-क्रीमी और अंडाकार होते हैं तथा मध्यम गहरी आंखें व गूदा क्रीमी होता है। यह मध्यम अवधि वाली किस्म है। फसल 100 से 120 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी पैदावार लगभग 300 से 350 क्विंटल प्रति हैक्टर है। यह पिछेता झुलसा रोग की मध्यम प्रतिरोधी है। इसमें शुष्क पदार्थ की मात्रा 19-20 प्रतिशत होती है। इसकी भंडारण क्षमता अच्छी है। यह किस्म उत्तर भारत के पहाड़ी इलाकों में खेती के लिए उपयुक्त है।

कुफरी गिरधारी

जाती है। इसकी पैदावार लगभग 300 से 350 क्विंटल प्रति हैक्टर है। इसमें पिछेता झुलसा रोग से बहुत अधिक प्रतिरोधकता है व शुष्क पदार्थ की मात्रा 18-19 प्रतिशत तक होती है। इसकी भंडारण क्षमता अच्छी है। यह किस्म भारत के पहाड़ी इलाकों में खेती के लिए उपयुक्त है।

कुफरी सहयाद्री

इस किस्म के कंद हल्के पीले अंडाकार, उथली मध्यम आंखें व गूदा पीला होता है। यह मध्यम अवधि वाली किस्म है। फसल 100 से 120 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी पैदावार लगभग 300 से 320 क्विंटल प्रति हैक्टर है। इसमें पिछेता झुलसा रोग से प्रतिरोधकता है। यह किस्म सिस्ट निमेटोड की दोनों स्पीशीज की अत्याधिक प्रतिरोधी है। इसमें शुष्क पदार्थ की मात्रा 19 प्रतिशत तक होती है। इसकी भंडारण क्षमता अच्छी है। यह किस्म नीलगिरी पहाड़ियों में खेती के लिए उपयुक्त है।

कुफरी कर्ण

इस किस्म के कंद सफेद-क्रीमी अंडाकार, उथली आंखें व गूदा सफेद होता है। यह मध्यम अवधि वाली किस्म है। फसल 100 से 120 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी पैदावार लगभग 250 से 300 क्विंटल प्रति हैक्टर है। इसमें पिछेता झुलसा रोग की प्रतिरोधकता है व शुष्क पदार्थ की मात्रा 17-20 प्रतिशत तक होती है। इसकी भंडारण क्षमता अच्छी है। इस किस्म में कुछ वायरस के प्रति रोधिता भी है। यह किस्म पठारी और पहाड़ी इलाकों में खेती के लिए उपयुक्त है।

कुफरी फ्राईसोना

इस किस्म के कंद आकर्षक सफेद-क्रीमी, लंबे-अंडाकार, सतही आंखों वाले तथा गूदा सफेद होता है। फसल 110-120 दिनों में तैयार हो जाती है। देश के मैदानी इलाकों में रबी की फसल में लगभग 300-350 क्विंटल प्रति हैक्टर कंद की पैदावार होती है। इसमें उच्च कंद शुष्क पदार्थ की मात्रा (22 प्रतिशत) और कम अवकारक शर्करा (30-80 मि.ग्रा. प्रति 100

कुफरी ललित

इस किस्म के कंद हल्के लाल, गोल, मध्यम-गहरी आंखों वाले तथा गूदा हल्का पीला होता है। यह मध्यम अवधि वाली किस्म है। इसकी फसल 90 से 100 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी उपज क्षमता लगभग 300 से 350 क्विंटल प्रति हैक्टर है। यह किस्म झुलसा रोग की प्रतिरोधी है व इसकी भंडारण क्षमता अच्छी है।

ग्राम ताजा आलू) पाई जाती है। यह किस्म पिछेता झुलसा रोग की प्रतिरोधी है। इसकी भंडारण क्षमता अच्छी है। इस किस्म के कंद फ्रेंच फ्राइज बनाने के लिए उपयुक्त हैं।

कुफरी फ्राईओम

इस किस्म के कंद आकर्षक सफेद, लंबे-अंडाकार, सतही आंखों वाले तथा गूदा सफेद होता है। फसल 100-110 दिनों में तैयार हो जाती है। मैदानी इलाकों में रबी की फसल में लगभग 300-350 क्विंटल प्रति हैक्टर पैदावार होती है। इसमें 20 प्रतिशत शुष्क पदार्थ और कम अवकारक शर्करा (50-90 मि.ग्रा. प्रति 100 ग्राम ताजा आलू) तथा इसमें बहुत अच्छी गुणवत्ता वाले फ्रेंच फ्राइज तैयार किए जा सकते हैं। यह किस्म पिछेता झुलसा रोग की सामान्य प्रतिरोधी है। इसमें आलू वायरस वाई से भी प्रतिरोधिता है। इसकी भंडारण क्षमता अच्छी है।

किसानों को उपयुक्त किस्म का चुनाव अपने क्षेत्रों की जलवायु व विशेष उद्देश्यों के अनुसार करना चाहिए। किसान यह भी ध्यान रखें कि चुनी गयी किस्म झुलसा रोग प्रतिरोधी हो। इससे रोगनाशक दवाओं के इस्तेमाल से बचा जा सकेगा तथा वातावरण प्रदूषित नहीं होगा। बैंगनी रंग वाली किस्म कुफरी नीलकंठ को विशिष्ट आलू किस्म के रूप में उगाकर अधिक मुनाफा कमाया जा सकता है। इसके उपभोग से उपभोक्ताओं को अच्छा पोषण भी मिलेगा। इस प्रकार उपयुक्त उन्नत किस्मों का चुनाव कर किसान अपने खेत से आलू की अधिक पैदावार ले सकते हैं तथा आर्थिक समृद्धि की ओर अग्रसर हो सकते हैं। ■

परंपरागत तरीके से बीज आलू उत्पादन

अश्वनी कुमार शर्मा*, राजेश कुमार सिंह, तनुजा बक्सेठ**** और **राजकुमार****

वानस्पतिक परिवर्धित फसल होने के कारण आलू के बीज को कई प्रकार के बीजजनित रोग साल-दर-साल संक्रमित करते हैं। इसलिए यह जरूरी हो जाता है कि फायदेमंद आलू उत्पादन के लिए अच्छे गुणवत्तायुक्त बीज का इस्तेमाल किया जाए। आलू की खेती के लिए कुल लागत का 40-50 प्रतिशत खर्च बीज पर ही होता है। कई बार गुणन के उपरांत बीज की गुणवत्ता में कमी आ जाती है। जब तक प्रत्येक किसान को उच्च गुणवत्तायुक्त बीज आलू उपलब्ध नहीं हो पाता, तब तक इस फसल की आंतरिक क्षमता को पूरी तरह उपयोग में नहीं लाया जा सकता। आलू उन कुछ बागवानी फसलों में से एक है, जिनमें वैज्ञानिक विधि की मदद से आधुनिक व अति जटिल तकनीकों द्वारा रोगरहित बीज उत्पादन प्रणाली विकसित की गयी है। इस प्रयत्न में भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान का योगदान उल्लेखनीय है। संस्थान में वर्ष 1962-63 में पूर्ण रूप से व्यवस्थित प्रजनित बीज उत्पादन का प्रारंभ किया गया। समयानुसार बीज आलू उत्पादन तकनीक में सुधार होता रहा और यह क्रम अभी भी जारी है।

वैश्विक आलू कॉन्क्लेव 2020

अंखुओं को निकालना

जाली/कांचघर में अंखुओं को उगाना

वर्तमान में देश में लगभग 2.17 मिलियन हैक्टर क्षेत्रफल में आलू की खेती की जा रही है। इसके लिए उच्च गुणवत्तायुक्त लगभग 5.4 मिलियन टन आलू बीज की आवश्यकता है। विभिन्न चरणों में बीज लगाने के लिए लगभग 0.35 मिलियन हैक्टर भूमि की जरूरत होती है। इतने क्षेत्र के लिए लगभग 3500 टन प्रजनित बीज की आपूर्ति होनी चाहिए। भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला हर वर्ष परंपरागत व हाई-टैक प्रणालियों की मदद से लगभग 3000 टन प्रजनित बीज पैदा कर रहा है।

भारत में बीज आलू उत्पादन प्रणालियां

भारत में दो प्रकार की बीज आलू उत्पादन प्रणालियां प्रचलित हैं:

- परंपरागत प्रणाली
- हाई-टैक प्रणाली।

*भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान केन्द्र, कुफरी;
**भाकृअनुप- केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला (हिमाचल प्रदेश)

परंपरागत बीज आलू उत्पादन प्रणाली

परंपरागत बीज उत्पादन प्रणाली में बीज आलू का उत्पादन निम्नलिखित चरणों/श्रेणियों में किया जाता है:

- नाभिक बीज
- प्रजनक बीज
- आधार बीज
- प्रमाणित बीज

परंपरागत बीज उत्पादन विधि

नाभिक बीज का विकास

पहाड़ी व मैदानी क्षेत्रों की उपयुक्त परिस्थितियों में नाभिक बीज का उत्पादन किया जाता है। पहाड़ी क्षेत्रों में इसका उत्पादन लंबे दिनों (ग्रीष्म ऋतु) में जबकि मैदानी क्षेत्रों में यह सर्दियों में छोटे दिनों में किया जाता है। परंपरागत बीज उत्पादन प्रणाली में नाभिक बीज का उत्पादन पुंजकों के चयन व ट्यूबर इंडेक्सिंग (कंद सूचीबद्ध) द्वारा किया जाता है।

ट्यूबर इंडेक्सिंग

इसमें प्रत्येक पुंजक के चुने हुए चारों सूचीबद्ध कंदों में विषाणुरहित गुणवत्ता का परीक्षण करने के लिए नेट हाउस में कंदों से निकाली गई आंखों (प्लग) को उगाकर प्रयोग किया जाता है। संस्थान में पुंजक चयन (प्रथम चरण से) का कार्य, पहाड़ी व मैदानी, दोनों क्षेत्रों में किया जाता है।

मैदानी क्षेत्रों की परिस्थितियां पहाड़ी क्षेत्रों की अपेक्षा ज्यादा उपयुक्त होती हैं। पहाड़ी कंदों का परीक्षण मैदानी क्षेत्रों में नवंबर-जनवरी व जनवरी-मार्च में दो चरणों में किया जाता है। सर्दियों में पहाड़ी क्षेत्रों में इंडेक्सिंग कांचघरों के नियंत्रित वातावरण में भी की जा सकती है। मैदानी क्षेत्रों में सुषुप्तावस्था तोड़ने के बाद फरवरी-अप्रैल में पत्तियों के एलाइजा या सितंबर में अंकुरण एलाइजा द्वारा कंदों की इंडेक्सिंग की जाती है।

आंखें निकालने के बाद आलू कंदों का भंडारण

कंदों में कीटाणुओं की उत्पत्ति को रोकने के लिए आंखें निकालने के बाद कंदों

एलाइजा के लिए नमूनों का संग्रहण

के छिद्रों में सीमेंट या राख+मैंकोजेब मिश्रण भर दिया जाता है। पहाड़ी इलाकों में आलू को एक छिद्रदार पॉलीथीन बैग अथवा लकड़ी/प्लास्टिक के बक्सों में क्रमवार तरीके से नवंबर से मार्च तक देसी भंडारगृह में रखा जाता है। मैदानी इलाकों में इन्हें इसी प्रकार से मार्च-सितंबर तक शीत भंडार में रखा जाता है।

निकाली गई एकल आंख की बुआई व जांच

निजर्मीकृत मिट्टी व गोबर की खाद के मिश्रण (1:1) को गमलों (4 इंच चौड़े मिट्टी या प्लास्टिक) में भरकर कांच घर में चार-चार गमलों के समूह में क्रमवार रखा जाता है। अंकुरण को नुकसान पहुंचाए बिना प्रत्येक गमले में एक आंख की बिजाई की जाती है। बुआई के तुरन्त बाद सिंचाई करते हैं तथा उसके बाद 8-10 दिनों तक आवश्यकतानुसार तीसरे दिन सिंचाई करते हैं। पौधों की बढ़वार व विषाणु गुणन के लिए 20^0-25^0 सेल्सियस तापमान उपयुक्त होता है।

आलू से आंख निकालना

एक विशेष प्रकार के चाकू द्वारा प्रत्येक पुंजक के चुने हुए चारों कंदों से शीर्ष आंखों के पास वाली एक-एक आंख (1 सें.मी. परिधि व 1.5 सें.मी तक लंबी) निकाली जाती है। आलू कंदों के शेष भाग को चार-चार के समूह में अलग-अलग रखा जाता है। अन्य स्वस्थ पुंजक कंदों तक विषाणु व शाकाणु आदि को फैलने से रोकने के लिए प्रत्येक आंख निकालने के बाद चाकू को स्प्रिट में डुबोकर निजर्मीकृत या स्टर्लाइज कर लिया जाता है। यदि आलू सुषुप्तावस्था में हो, तो उस स्थिति में निकाली गई आंख को 10 पीपीएम जिब्रेलिक एसिड, एक प्रतिशत थायोयूरिया और 0.2 प्रतिशत मैंकोजेब के घोल में एक घंटे तक उपचारित करते हैं। उसके बाद इन आंखों को छाया में सुखाया जाता है और प्रत्येक पुंजक की चारों आंखों को 10×5 सें.मी. आकार के छिद्रदार पॉलीथीन बैग में रखकर ब्यौरा टिकट लगाकर बंद करते हैं।

प्रजनक बीज आलू उत्पादन

बुआई का तरीका व दूरी

द्वितीय चरण (नाभिक बीज) के बीज का गुणन तीसरे चरण में कंदों को 60×20 सें.मी. की दूरी पर लगाकर किया जाता है। तीसरे चरण के बीज को प्रजनक पूर्व बीज कहा जाता है। तीसरे चरण (प्रजनक पूर्व बीज) से प्राप्त बीज का गुणन, चौथे वर्ष में चौथे चरण में किया जाता है तथा इसे प्रजनक बीज कहते हैं।

प्रथम चरण (नाभिक बीज)

अंकुरित बीज कंद

द्वितीय चरण (नाभिक बीज)

पूर्व आधारित एवं आधारित/प्रजनक बीज

परंपरागत बीज उत्पादन प्रणाली के विभिन्न चरण

प्रजनक बीज फसल का खेत परीक्षण

केवल तीसरे व चौथे चरण में एलाइजा विधि द्वारा एक हैक्टर खेत में कहीं से भी अनुमानतः 300 व 150 पौधों का परीक्षण किया जाता है। खेत परीक्षण के दौरान विजातीय व रोगी पौधों को निकाल दिया जाता है। बीज खेत विधि के अन्य सिद्धांतों का पालन किया जाता है।

सारणी 1. बीज सरकारी/गैर सरकारी सगंठनों द्वारा बीज आलू का उत्पादन

क्र.सं.	बीज की श्रेणी	संगठन
1.	नाभिक बीज	भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान
2.	प्रजनक बीज	भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान
3.	आधार बीज-1	राज्य कृषि विश्वविद्यालय, राज्य कृषि व बागवानी विभाग, राष्ट्रीय बीज निगम व भारत सरकार के राज्य प्रक्षेत्र निगम
4.	आधार बीज-2	राज्य कृषि व बागवानी विभाग, राष्ट्रीय बीज निगम व भारत सरकार के राज्य प्रक्षेत्र निगम
5.	प्रमाणित बीज	राज्य कृषि एवं बागवानी विभाग, राज्य बीज निगम और सहकारी समितियां व राष्ट्रीय बीज निगम आदि

सारणी 2. विभिन्न क्षेत्रों में बीज बुआई का समय

क्र.सं.	स्थान	बुआई की तिथि
1.	पंजाब	15 अक्टूबर
2.	हरियाणा, राजस्थान व पश्चिमी उत्तर प्रदेश	25 अक्टूबर
3.	पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल व ओडिशा	5 नवंबर

सारणी 3. विभिन्न क्षेत्रों में बीज आलू की फसल के डंठलों की कटाई का समय

क्र.सं.	स्थान	डंठल नष्ट करने की तिथि
1.	पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश	दिसंबर के अंत तक
2.	उत्तर प्रदेश के मध्य इलाके व मध्य प्रदेश	10 जनवरी
3.	पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल व ओडिशा	15 जनवरी

प्रमाणित आलू बीज उत्पादन

प्रमाणित बीज का उत्पादन पंजीकृत आलू उत्पादकों व किसानों द्वारा किया जाता है। यह आधार बीज-2 की संतति होती है। राज्य बीज प्रमाणीकरण संस्थान द्वारा इस वर्ग के बीज की गुणवत्ता का निरीक्षण किया जाता है। यह प्रमाणीकरण व्यवस्था रोगों व नाशीजीव के प्रसार पर रोक लगाती है।

सीपीआरआई द्वारा पैदा किया गया प्रजनक बीज विभिन्न राज्य सरकारी संगठनों को फाउंडेशन-1, फाउंडेशन-2 व प्रमाणित बीज जैसे तीन चरणों में गुणन करने के लिए दिया जाता है। वैसे वर्तमान में राज्य सरकारों द्वारा पैदा किया जा रहा बीज प्रजनित बीज गुणन शृंखला के अनुरूप नहीं है। इससे देश में प्रमाणित बीज की भारी कमी रहती है। परंपरागत बीज उत्पादन प्रणाली की अपनी कुछ सीमाएं हैं, जैसे (1) गुणन दर का कम होना (2) आरंभिक व्यवस्था में अधिक मात्रा में रोगमुक्त प्रवर्धनों की आवश्यकता (3) रोगी बीज से 100 प्रतिशत स्वस्थ बीज पैदा करने की धीमी व अधिक समय लेने की प्रक्रियाएं (4) हर अगली पीढ़ी में विषाणु रोगों का संचयन तथा (5) आरंभिक रोगरहित बीज का कई बार गुणन करना (7 बार)। इन सीमित प्रक्रियाओं से बचने, बीज आलू की गुणवत्ता में सुधार लाने व बीज आलू तैयार करने में खेत गुणन की पीढ़ियों को कम करने के ध्येय से हाई-टैक (सूक्ष्म संवर्धन) प्रणाली कारगर साबित हो रही है। भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान धीरे धीरे परंपरागत तरीकों से बीज उत्पादन करने के साथ हाई-टैक प्रणाली की ओर उन्मुख हो रहा है।

एलाइजा के लिए नमूनों को पीसना

प्रक्रिया अनुसार बुआई के 6-7 सप्ताह बाद या जब पौधे पर 6 से 8 पत्तियां निकल आएं तो विषाणु मुक्ति के लिए एलाइजा द्वारा पौधे का परीक्षण किया जाता है। यदि चार-चार के समूह में से एक भी पौधा विषाणु ग्रसित पाया जाता है तो उस स्थिति में उस समूह के आंखें निकाले व बिना आंख निकाले गए पुंजक के सभी कंदों को नष्ट कर दिया जाता है।

नाभिक बीज आलू उत्पादन

बुआई का तरीका व दूरी

एलाइजा के दौरान प्राप्त विषाणुमुक्त सूचीकृत कंदों का उपयोग आगे खेत गुणन के लिए किया जाता है। पहाड़ी इलाकों में विषाणुमुक्त सूचीकृत कंदों को प्रथम चरण में 1×1 मीटर तथा मैदानी इलाकों में 1.2×1.2 मीटर की दूरी पर उगाया जाता है। प्रथम चरण से प्राप्त पुंजकीय कंदों को पहाड़ी इलाकों में दूसरे चरण में 1×0.2 मीटर तथा मैदानी इलाकों में 1.2×0.2 मीटर की दूरी पर लगाया जाता है। मैदानी इलाकों में प्रथम चरण की बुआई हाथ से या यांत्रिक तरीके से की जा सकती है, जबकि पहाड़ी इलाके में यह हाथ से ही की जाती है। यदि मृदा सूखी हो तो उस स्थिति में बीज कंदों को गहराई में लगाएं और यदि नमी उचित हो तो कंदों को जमीन में रखकर कंदों पर 15 सें.मी. की ऊंचाई तक भुरभुरी मिट्टी डालकर मेड़ें बना दें।

एलाइजा के लिए नमूने डालना

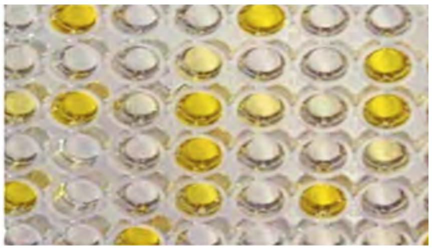

पीले छिद्र दर्शाते हैं विषाणु ग्रसन

प्रथम चरण के एकल पौधे से उपजे कंदों को पुंजक के आधार पर दूसरे चरण में लगाएं। हाथ से बीज लगाने की स्थिति में कंद का शीर्ष भाग ऊपर की ओर रखें।

नाभिक बीज फसल का खेत परीक्षण

पीवीएक्स, पीवीएस, पीवीवाई, पीवीएम, पीवीए व पीएलआरवी विषाणुओं के लिए प्रथम चरण में एलाइजा परीक्षण किया जाना चाहिए। प्रत्येक पुंजकों के सभी चार पौधों की पत्तियां एकत्रित करके संयुक्त नमूना लिया जाता है, जबकि द्वितीय चरण में एलाइजा द्वारा 100 प्रतिशत पुंजकों का परीक्षण किया जाता है। एलाइजा परीक्षण के दौरान पाए गए विषाणु प्रभावित पौधों के साथ-साथ खेत निरीक्षण के दौरान रोगी व विजातीय पौधों को निकाल दिया जाता है। प्रथम एवं द्वितीय चरणों में उत्पादित/गुणित बीज को नाभिक बीज कहते हैं।

डंठलों की कटाई या नष्ट करना

डंठलों की कटाई के 7-10 दिनों पहले यानी उत्तर-पश्चिमी मैदानी इलाकों में दिसंबर के तीसरे सप्ताह तथा पूर्वोत्तर मैदानी इलाकों

बीज आलू उत्पादन के लिए उपयुक्त क्षेत्र, मौसम, फसलकाल व तकनीक

- बीज आलू पैदा करने के लिए पिछले तीन वर्षों में मृदाजनित रोगों व जीवनाशी कीट, कवचधारी सूत्रकृमि, बिना कवच वाले सूत्रकृमि तथा अन्य रोगों विशेषकर वार्ट तथा भूरा गलन, शाकाणु गलन, काली रूसी व साधारण खुरंड इत्यादि से मुक्त क्षेत्र का चयन करना चाहिए।
- भारत में हिमाचल प्रदेश के कवचधारी सूत्रकृमि से मुक्त क्षेत्र, पंजाब, हरियाणा के मैदानी इलाके, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश व बिहार के पश्चिमोत्तरी इलाके नाभिकीय व प्रजनक बीज उत्पादन के लिए उपयुक्त हैं।
- उत्तर प्रदेश, जम्मू व कश्मीर तथा पश्चिमोत्तर के समुद्र तल से 7000 फीट या ज्यादा ऊंचाई पर स्थित अन्य क्षेत्र आधार बीज उत्पादन के लिए उपयुक्त हैं।
- बीज आलू उत्पादन के लिए ऐसे क्षेत्र का चयन करें, जहां बुआई के बाद कम से कम 75 दिनों का समय माहूंमुक्त या कम माहूं वाला हो।
- सीड प्लॉट तकनीक के अनुसार उच्च गुणवत्ता वाले बीज का इस्तेमाल करते हुए बीज आलू की फसल माहूं अवधि में अक्टूबर से जनवरी के प्रथम सप्ताह के दौरान ली जानी चाहिए। इसके साथ ही बीज आलू की फसल में एकीकृत जीवनाशी व रोग प्रबंधन, खरपतवार नियंत्रण, डंठलों की कटाई जैसे काम एफिड के चरम सीमा तक पहुंचने से पहले यानी दिसंबर के अंतिम सप्ताह या जनवरी के दूसरे सप्ताह तक कर लेने चाहिए।

में जनवरी के पहले सप्ताह में सिंचाई बंद कर देनी चाहिए। बीज आलू की फसल में माहूं के क्रान्तिक स्तर (20 एफिड प्रति 100 यौगिक पत्तियां) पार करने से पहले डंठलों को नष्ट कर देना चाहिए। डंठलों को दरांती से काटकर या ग्रामोक्सोन की 2.5-3.0 लीटर मात्रा प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव कर नष्ट किया जा सकता है। डंठलों की कटाई के तुरन्त बाद जमीन से बाहर निकले कंदों को मिट्टी में दबा देना चाहिए तथा यदि कोई डंठल दोबारा निकले तो उन्हें नष्ट कर देना चाहिए।

आधार बीज उत्पादन (आधार बीज-1 व आधार बीज-2)

संस्थान द्वारा उत्पादित प्रजनक बीज, राज्य कृषि/उद्यान विभागों, राष्ट्रीय निगम तथा भारतीय राज्य प्रक्षेत्र निगम को दिया जाता है। इन विभागों द्वारा सरकारी प्रक्षेत्रों/ठेके के उत्पादकों के खेतों में बीज खेत विधि के सिद्धांतों का पालन करते हुए आधार बीज-1 व आधार बीज-2 में गुणन किया जाता है। आधार बीज-1 का उत्पादन प्रजनक बीज से व आधार बीज-2 का उत्पादन आधार बीज-1 से किया जाता है। आधार बीज-1, आधार बीज-2 व प्रमाणित बीज को संबंधित राज्य की प्रमाणीकरण संस्था द्वारा प्रमाणित किया जाता है। ■

किस्सा आलू का

वैश्विक आलू कॉन्क्लेव 2020

जब आलू की खेती करना था अपराध

आज भले ही आलू अधिकतर घरों की रसोई में पाया जाता है और लोग सब्जियों से लेकर इससे तैयार विविध उत्पादों को बड़े चाव से खाते हैं। लेकिन एक समय ऐसा भी था, जब इसे अंधेरे की फसल कहा जाता था और लोग खाने से डरते थे। खासकर यूरोपीय देशों में आलू को शक की नजरों से देखा जाता था। इन देशों में आलू पर प्रतिबंध था लेकिन धीरे-धीरे आलू ने लोगों के दिलों में जगह बना ली, यह बात वर्ष 1769 की है। उस समय फ्रांस में गेहूं की फसल को भारी नुकसान पहुंचा था और ब्रेड दुकानों से गायब हो चुकी थी। पेरिस की गलियों में दंगे हो रहे थे और बेकरियों में लूटपाट हो रही थी। फ्रेंच राजतंत्र का हाल ही में रूस, ऑस्ट्रिया और प्रूसिया से 7 वर्ष तक चला युद्ध खत्म हुआ था। फ्रांस भुखमरी के कगार पर था। ऐसे में फ्रांस ने अकाल की विभीषिका से बचाने वाले भोजन पर सर्वश्रेष्ठ अध्ययन के लिए पुरस्कार देने की घोषणा की।

इस पुरस्कार के विजेता एक युवा फार्मेसी अप्रेंटिस एंट्यानो ऑगस्टीन परेंटियर थे, जिन्होंने कुछ वर्ष प्रूसिया की जेल में बिताए थे। सात वर्ष तक चले युद्ध में घायल होने पर उन्हें वर्ष 1761 में हानोवर जेल में रखा गया था। यहां उन्होंने अपनी जेल की कोठरी के बाहर आलू के पौधों को देखते हुए वक्त काटा था। यहां उन्हें रोज तीन आलू खाने को मिलते थे। आलू के सेवन ने उन्हें दो वर्ष जेल में रहने के दौरान स्वस्थ रखा।

युद्ध समाप्त होने पर अपने दिमाग में आलू की यादों को संजोकर वह पेरिस लौट आए। आलू की खूबियों को बताकर उन्होंने पुरस्कार जीत लिया। इस समय तक आलू को यूरोप में आए 150 से ज्यादा वर्ष हो गए थे, लेकिन अब तक उसे तवज्जो नहीं मिली थी। पादरियों ने आलू को उगाने में यह कहकर प्रतिबंध लगा दिया था कि यह इंसानी उपभोग के लिए ठीक नहीं है, क्योंकि बाइबल में इसका जिक्र नहीं है।

इंग्लैंड के वनस्पति वैज्ञानिकों ने आलू को धूल और अंधेरे का उत्पाद बताया था। वर्ष 1616 में फ्रांस के बरगंडी प्रांत में आलू की खेती पर प्रतिबंध था।

आलू की स्वीकार्यता वर्ष 1740 के दशक में प्रूसिया में मिलनी शुरू हुई। प्रूसिया के शासक फ्रेडरिक महान ने ऑस्ट्रिया से आठ वर्ष तक चले युद्ध के दौरान महसूस किया था कि आलू में युद्ध के दौरान लोगों को जीवित रखने की क्षमता है, क्योंकि शत्रु अनाज की फसल तबाह कर देते हैं।

वर्ष 1744 में उन्होंने आलू के बीज वितरित करने और उगाने का आदेश दिया। वर्ष 1744 में जब आलू बाल्टिक के तटवर्ती नगर कोलबर्ग में आया तो किसानों से उसे स्वीकार नहीं किया। माना जाता है कि तब फ्रेडरिक ने चेतावनी दी कि जो आलू को स्वीकार नहीं करेंगे उनके नाक और कान काट दिए जाएंगे।

वर्ष 1745 से सैनिक बड़ी मात्रा में आलू रखने लगे। फ्रांस में फ्रेडरिक जैसा शासक आलू के समर्थन में नहीं आया था, लेकिन परेंटियर के पुरस्कार जीतने पर वह शाही घराने के नजदीक पहुंच गया। वर्ष 1785 में 23 अगस्त को राजा का जन्मदिन था। इस मौके पर परेंटियर ने आलू के फूलों का गुलदस्ता भेंट किया। इससे राजा और उनकी पत्नी इतने प्रभावित हुए कि आलू को व्यंजन सूची में शामिल करने का आदेश दे दिया। इसके बाद शाही परिवार को आलू परोसा जाने लगा। उधर, परेंटियर अक्सर भोज का आयोजन करते थे, जिसमें मेहमानों को केवल आलू ही परोसा जाता था।

ऐसे ही भोज में एक बार वैज्ञानिक और राजनीतिज्ञ बैंजामिन फ्रेंकलिन और थॉमस जेफरसन शामिल हुए। परेंटियर ने वर्ष 1786 में आलू की खेती शुरू की और खेत में चौकीदार रख दिया। इसने लोगों का ध्यान खींचा और माना जाने लगा कि आलू बेशकीमती है। फिर बहुत से लोगों ने आलू चोरी कर लिए और खुद उगाना शुरू कर दिया। 19वीं शताब्दी में थॉमस माल्थस और चार्ल्स डार्विन ने आलू की वकालत की। इसके बाद आलू ने ऐसी गति पकड़ी कि कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा। ■

प्रस्तुति : अश्विनी कुमार निगम

ऐरोपोनिक एक ऐसी विधि है, जिसमें पौधों को बिना मिट्टी के 100 प्रतिशत नमीयुक्त वातावरण में उगाया जा सकता है। इस पद्धति में बंद डिब्बों में पौधों की जड़ों पर पोषक तत्वों से पूर्ण घोल का छिड़काव किया जाता है और छोटे बीज कंदों की 10-15 बार निश्चित अंतराल पर तुड़ाई की जाती है।

ऐरोपोनिक विधि से बीज आलू का उत्पादन

विनय सिंह*, **राजेश कुमार सिंह****, **सुखविन्दर सिंह*****, **तनुजा बक्सेठ**** और **जागेश कुमार तिवारी****

आलू में उत्तम गुणवत्ता वाले बीज की उपलब्धता हमेशा ही आवश्यकता से कम रही है। गेहूं और धान जैसी फसलों में प्रति हैक्टर जितनी पैदावार होती है, लगभग उसके बराबर ही आलू में प्रति हैक्टर बीज कंद की आवश्यकता होती है। भारत में वर्ष 1968 आलू के गुणवत्तायुक्त बीज का उत्पादन कार्यक्रम शुरू किया गया था। यह वानस्पतिक फसलों में पहला बीज उत्पादन कार्यक्रम था। यह पद्धति आलू कंदों में सामान्यत: पाये जाने वाले विषाणुओं की जांच एवं उनके उन्मूलन तथा रोगमुक्त कंदों की चार पीढ़ी के कृन्तक बहुलीकरण (क्लोनल मल्टीप्लीकेशन) पर आधारित है।

यह पारंपरिक बीज आलू पैदा करने की विधि बहुत विश्वसनीय है। इस विधि द्वारा पैदा किए गए बीजों को किसानों तक पहुंचाने में सात से आठ वर्ष लग जाते हैं। इस अवधि में बीज में कई तरह के रोग लगने की आशंका बनी रहती है। इस बात को ध्यान में रखते हुए बीज आलू का उत्पादन ऊतक संवर्धन (टिशू कल्चर) विधि द्वारा शुरू किया गया। इस विधि में टिशू कल्चर तकनीकी से पैदा किए हुए छोटे पौधों को नेट हाउस में लगाया जाता है। इससे पौधे चैंपा (माहूं) एवं अन्य रोग फैलाने वाले कीट-पतंगों से बचे रहते हैं। इस विधि द्वारा प्रति पौधा चार से सात छोटे कंद मिलते हैं, जिनका वजन 2 से 40 ग्राम तक हो सकता है।

ऐरोपोनिक विधि के लाभ

- ऐरोपोनिक विधि में प्रति पौधा 40-50 छोटे कंद मिलते हैं। ये पारंपरिक आलू बीज उत्पादन की विधियों से संख्या में 10-12 गुना अधिक होते हैं।
- इस विधि में बीज कंदों को हर चौथे, पांचवें दिन तोड़े जाने के कारण इनके आकार में समानता बनी रहती है। आवश्यकतानुसार तोड़े जाने वाले आलू का आकार भी हम सुनिश्चित कर सकते हैं। इनकी एकसार बिजाई करना भी आसान रहता है।
- ऐरोपोनिक में पौधों को हवा में ही उगाया जाता है। इस कारण मृदाजनित रोगों के होने की आशंका नहीं होती।
- खेत से प्राप्त होने वाले आलू बीज कंदों की अपेक्षा ऐरोपोनिक से बीज कंदों की प्रति पौधा पैदावार लगभग दोगुनी (वजन के अनुसार) प्राप्त होती है। इस प्रकार सभी पौधों की जड़ों को पोषक तत्वों की उपलब्धता पर्याप्त एवं एक समान होती है। इस विधि में छोटे आकार के बीज आलू कंद होने के कारण उन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान पर लाना और ले जाना भी सुविधाजनक रहता है।
- मिट्टी की तुलना में ऐरोपोनिक विधि में सिर्फ 5-10 प्रतिशत पानी एवं 10-15 प्रतिशत पोषक तत्वों का इस्तेमाल होता है। इसलिए इस विधि को पानी की कमी वाले क्षेत्रों में भी आलू बीज उत्पादन के लिए प्रयोग किया जा सकता है।
- प्रति कंद उत्पादन लागत अन्य विधियों की तुलना में अपेक्षाकृत पांच से छ: गुना कम आती है।

ऐरोपोनिक विधि से तैयार होते आलू बीज

*भाकृअनुप-केंद्रीय आलू अनुसंधान केन्द्र, मोदीपुर; **भाकृअनुप-केंद्रीय आलू अनुसंधान केन्द्र, शिमला; ***भाकृअनुप-केंद्रीय आलू अनुसंधान केन्द, जालंधर

बीज आलू उत्पादन की पारंपरिक विधियों की कमियां

- इन विधियों में गुणनदर कम होने की वजह से किसान तक पहुंचते-पहुंचते बीज काफी पुराना हो जाता है और कई तरह के रोग लगने की आशंका रहती है।
- आलू की टिशू कल्चर विधि में प्रति पौधा पांच से आठ छोटे आलू मिलते हैं, इसलिए टिशू कल्चर पौधों की अधिक संख्या में जरूरत होने के कारण टिशू कल्चर प्रयोगशाला पर अधिक दबाव रहता है। यह अपेक्षाकृत अधिक महंगी भी होती है।
- पारंपरिक विधियों में मिट्टी से होने वाले रोगों की अधिक आशंका बनी रहती है, जिससे बीज की गुणवत्ता प्रभावित होती है।
- इन विधियों द्वारा पैदा किए गए कंदों का आकार एक समान न होने के कारण आलू की बिजाई करना कठिन होता है और पौधे एक समान नहीं उगते।
- आलू के पौधे मिट्टी से एक सीमित मात्रा तक ही पोषक तत्व ले पाते हैं। इस कारण एक सीमित पैदावार ही प्राप्त हो पाती है।

ऐरोपोनिक विधि से तैयार आलू के पौधे

ऐरोपोनिक विधि

इस विधि में सर्वप्रथम टिशू कल्चर पौधों का दृढ़ीकरण (हार्डनिंग) किया जाता है। दृढ़ीकरण के लिए टिशू कल्चर पौधों को 28^{0} सेल्सियस तापमान पर 15-21 दिनों तक रहने दिया जाता है। इसके उपरांत इन पौधों को विशेष प्रकार से निर्मित ऐरोपोनिक बक्सों की ऊपरी सतह पर लगाया जाता है। इन बक्सों की ऊपरी सतह पर 20 मि.मी. गोल छेद निर्धारित या आवश्यकतानुसार दूरी पर बनाए जाते हैं एवं हर छेद में एक पौधा लगाया जाता है। इसमें जड़ का भाग डिब्बे में अंधेरे में जबकि ऊपरी भाग बाहर सूरज की रोशनी में रहता है।

रोपाई के लिए जड़सहित सूक्ष्म कटिंग

पौधों की जगह पौधे की कटिंग का भी प्रयोग किया जा सकता है। डिब्बों को अंदर से पूर्णतया काला किया जाता है। इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है कि अंदर प्रकाश जड़ तक बिल्कुल न जा पाये। इन छतों को केवल आलू की तुड़ाई एवं निरीक्षण के समय ही उठाया जाता है। पोषक तत्वों के मिश्रण को एक बड़े टैंक में पानी में घोला जाता है। इस घोल में सभी 13 आवश्यक तत्व एक निर्धारित मात्रा में मिलाये जाते हैं। ऐसी व्यवस्था की जाती है कि अतिरिक्त घोल जड़ों पर छिड़काव के बाद वापस एकत्र होकर दोबारा उसी टैंक में निरंतर आता रहे। विशेष तरह के स्वचालित स्प्रे यंत्रों एवं ग्रो बॉक्स में लगे नोजलों के माध्यम से हर पांच से दस मिनट के अंतराल पर 15-20 सेकेंड के लिए पोषक तत्वों के मिश्रण का जड़ों पर छिड़काव किया जाता है। इस विधि में पोषक घोल का पुनः संचरण होता रहता है। इसमें पानी और पोषक तत्वों का प्रयोग

बीज आलू कंद

मिट्टी की तुलना में बहुत कम होता है। खेत की ही तरह 25-30 दिनों बाद डिब्बों के अंदर 30-40 सें.मी. लंबी जड़ें बनने के बाद छोटे-छोटे आलू कंद बनने आरंभ हो जाते हैं। तीन से चार ग्राम के आलू कंदों को 45 से 50 दिनों की फसल होने के बाद पहली बार चुना जाता है। एक निश्चित अंतराल पर पोषक तत्वों के घोल को बदलते रहते हैं। पौधों को समुचित मात्रा में पोषक तत्वों की उपलब्धता बनी रहनी चाहिए। पोषक तत्वों के घोल के पी-एच मान का निरतंर निरीक्षण करते रहना चाहिए एवं उसे 6.0 के लगभग बनाये रखते हैं। इसके बाद हर चौथे-पांचवें दिन पहले से निश्चित आकार के आलू तोड़ लिए जाते हैं। उनको फफूंदनाशक दवाई से उपचारित करने के बाद 10-15 दिनों के लिए हल्की रोशनी में रखा जाता है ताकि कंद हरे हो जायें। ये छोटे कंद अगले मौसम में जालीनुमा घर (नेट हाउस) में उगाये जाते हैं। इनका प्रयोग करके आने वाले वर्षों में बीज आलू की गुणात्मक पैदावार प्राप्त की जाती है। समूची ऐरोपोनिक प्रणाली को पॉलीकार्बोनेट शीट से बने घर में स्थापित किया जाता है। इसमें साफ-सफाई की विशेष व्यवस्था की आवश्यकता होती है। ऐरोपोनिक विधि के माध्यम से पारंपरिक विधियों की अपेक्षा 10-12 गुना अधिक संख्या में प्रति पौधा बीज कंदों का उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए इस विधि से भारत में कम समय में अधिक मात्रा में गुणवत्तायुक्त बीज आलू उत्पादन करने की अच्छी संभावना दिखाई पड़ती है। इस विधि का गैर-पारंपरिक आलू बीज उत्पादन एवं पानी की कमी वाले क्षेत्रों में भी उपयोग किया जा सकता है। भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला इस तकनीकी को यांत्रिकी एवं फसल उत्पादन के दृष्टिकोण से विभिन्न क्षेत्रों के लिए और अधिक मजबूत करने की कोशिशों में लगातार अग्रसर है। ■

सत्य बीज आलू उत्पादन की उन्नत तकनीक

शैलेज सूद*, सुन्दरेशा एस.*, विनय भारद्वाज*, दलामू* और हेमन्त कार्डीले*

सत्य आलू बीज प्रवर्धन तकनीक विश्वभर में आलू की खेती, उद्योग और अनुसंधान कार्यों में क्रांति ला सकती है। अभी तक आलू की किस्मों का प्रबंधन कंद द्वारा किया जाता है। सत्य बीज आलू (टीपीएस) अर्थात वानस्पतिक बीज के उपयोग से बीज भंडारण, रखरखाव, अपवाहन एवं विषाणुओं, कीटों तथा रोगों की समस्याओं से आसानी से छुटकारा पाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त लक्षित आनुवंशिक जोड़-तोड़ भी सरलता से संयुग्मीय पैतृक किस्मों में की जा सकती है, जिसके फलस्वरूप उच्चतम आलू प्रजातियों का विकास किया जा सकता है।

वैश्विक आलू कॉन्क्लेव 2020

विश्व के बहुत से देशों में आलू मुख्य खाद्याहार है। उच्च विषम युग्मीयता एवं पॉलीप्लॉइड जीनोम होने के कारण किस्म की शुद्धता बनाए रखने के लिए इन्हें कंदों के माध्यम से उगाया व बढ़ाया जाता है। आलू एक ऑटो टेट्राप्लोइड एवं स्वयं परागण प्रजाति है। स्वपरागण के कारण आलू की प्रजातियां अंत: प्रजनन अवसाद प्रदर्शित करती हैं, जिसका कारण प्रजातियों की उच्च विषम युग्मता है। स्वपरागण से जानलेवा एलील व्यक्त होने के कारण पौधे जीवित नहीं रहते हैं। अत: समयुग्मक किस्मों को चतुगुर्णित आलू में विकसित नहीं किया जा सकता एवं किस्मों और उन्नत प्रजनन सामग्री का रखरखाव केवल कंद के रूप में किया जाता है। किस्म एवं अन्य प्रजनक किस्मों का कंदों के रूप में कृन्तक प्रवर्धन के माध्यम से रखरखाव के कारण कीट एवं रोगों, मुख्य रूप से विषाणुओं का संचयन होता है। यह क्लोनल प्रवर्धन के प्रत्येक चक्र के दौरान बढ़ता जाता है। इस कारण किस्म की उत्पादकता एवं स्वीकार्यता में कमी आती है। इसके अतिरिक्त आलू प्रजनन कार्यक्रम के माध्यम से नई किस्म विकसित करने में 12 वर्षों का समय लगता है एवं यह कंदों के क्लोनल प्रवर्धन पर आधारित होती है। किस्म के बीज भी कंदों के माध्यम से क्लोनल रूप से बढ़ते हैं, जहां बीजों की गुणनदर लगभग 1:8 कंद प्रतिवर्ष होती है। टीपीएस से आलू को उगाने एवं बढ़ाने के लिए वैश्विक स्तर पर प्रयास जारी हैं।

सत्य बीज आलू के कंद

द्विगुणित संकर आलू प्रजनन

द्विगुणित संकर सत्य बीज आलू के माध्यम से आलू का प्रवर्धन एक पूर्ण रूप से नवीन प्रजनन विधि है, जो नीदरलैंड में विकसित हुई थी। इसे भारत सहित सभी आलू उत्पादक देशों द्वारा अपनाने का प्रयास किया जा रहा है। नवीन द्विगुणित संकर प्रजनन तकनीक लैंगिक प्रवर्धन के माध्यम से कार्य करती है। यह विधि द्विगुणित खेती वाली प्रजातियों एवं सोलानम ट्यूबरोसम के द्विगुणित की पहचान एवं मूल्यांकन पर आधारित है। इसमें स्वीकार्य कंद एवं अन्य पादप संबंधी विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए चयन किया जाता है। द्विगुणित आलू प्राकृतिक रूप से आत्म-विसंगत होते हैं। उन्हें आत्म-संगत बनाने के लिए द्विगुणित क्लोन में एस.एल.आई जीन का अनुक्रमण किया जाता है एवं समयुग्मीय द्विगुणित किस्म प्राप्त करने के लिए कुछ पीढ़ी तक इसका स्वपरागण किया जाता है। द्विगुणित समयुग्मीय अंत:प्रजनन किस्मों का विभिन्न कंदों, पादप एवं अनुकूलन संबंधी लक्षणों के लिए मूल्यांकन किया जाता है। कार्यक्षम किस्म में मौजूद दोनों पैतृक किस्मों से वांछित जीन प्राप्त करने के लिए एफ$_1$ संकर सम्मिश्रण के लिए चयनित किया जाता है। सम युग्मीय द्विगुणित किस्म का विकास एक उत्तरोत्तर प्रक्रिया है, जिसमें विभिन्न क्रॉसिंग एवं चयन संबंधी चक्र सम्मिलित होते हैं। इसके पश्चात इन संकर सम्मिश्रण का परीक्षण नई प्रजाति प्राप्त करने के लिए किया जाता है, जो दोनों पैतृक किस्मों के सर्वोत्तम विशेषताएं प्रदर्शित करते हैं।

इन दो पैतृक किस्मों के लैंगिक संकरण के परिणामस्वरूप कुछ आलू कंदों की बजाय प्रति पादप हजारों आलू के सत्य बीज प्राप्त होते हैं। अत: नवीन किस्म की बढ़ोतरी तेजी से हो पाती है। लैंगिक संकरण से प्राप्त प्रजाति एक मूल सत्य बीज होता हैं। ये रोगों से मुक्त होते हैं एवं विश्व के समस्त आलू उत्पादकों के लिए उत्कृष्ट बीज सामग्री है। इन संकर आलू बीज को बुआई करके इसके छोटे पौधे प्राप्त किए

*भाकृअनुप-केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला (हिमाचल प्रदेश)

सत्य बीज आलू के पौधे

जा सकते हैं। इन पौधों को व्यावसायिक खेती के लिए प्रक्षेत्रों में प्रत्यारोपण किया जा सकता है। यह तकनीक हमें विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नई किस्म के तेजी से विकास का अवसर प्रदान करती है। इस विधि में हम पैतृक किस्मों में सुधार करके तेजी व आसानी से लक्षित नई प्रजातियां प्राप्त कर सकते हैं। आलू प्रजनन में टीपीएस आधारित द्विगुणित संकरण के प्रयोग से आलू प्रजनन में अत्यधिक जेनेटिक लाभ होगा।

अर्द्धसूत्री विभाजन जीन संपादन के माध्यम से किस्म विशिष्ट सत्य आलू बीज

विषयम युग्मता के नियतन द्वारा भी सत्य बीज आलू का प्रवर्धन सामग्री के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। इसके अंतर्गत वियोजन रहित सामान्य पैतृक प्रकार चतुर्गुणित पादप प्राप्त करने के लिए अनियोजित युग्मक (2n) का उत्पादन कर अगुणित प्रेरक किस्म का प्रयोग किया जाता है। यह क्रिस्पर-कैस जीनोम संपादन उपकरणों के प्रयोग से अर्द्धसूत्री विभाजन में शामिल मुख्य जीन की अभिव्यक्ति को बाधित कर किया जा सकता है, जिससे अप अर्धसूत्री विभाजन वाले बीजों को विकसित किया जा सके। इस प्रक्रिया में कोशिका विभाजन के पुनर्संयोजन एवं वियोजन चरणों में शामिल तीन जीनों में बदलाव के द्वारा आलू में अर्द्धसूत्री विभाजन प्रक्रिया को लक्षित करना शामिल है। इससे अनियोजित युग्मकों का उत्पादन होता है। अनियोजित युग्मकों का उत्पादन करने वाले पादपों का अगुणित प्रेरक किस्मों से संकरण किया जाता है। इससे सामान्य बहुगुणित पैतृक प्रकार के सत्य आलू बीज प्राप्त होते हैं। इस नई परिकल्पना के परिणामस्वरूप सत्य आलू बीज उत्पादन में विषम युग्मता का नियतन किया जा सकता है। ■

आलू के रोचक तथ्य

वैश्विक आलू कॉन्क्लेव 2020

- आलू दुनिया की पहली फसल है, जो अंतरिक्ष में सफलतापूर्वक उगायी जा चुकी है। नासा प्रौद्योगिकी और विस्कॉन्सिन विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों के प्रयासों से आलू को 1995 में अंतरिक्ष में सफलतापूर्वक उगाया गया था।
- आलू सब्जी है, लेकिन इसमें बहुत सारे स्टार्च (कार्बोहाइड्रेट) होते हैं, जो इसे पोषण के मामले में चावल, पास्ता और ब्रेड की तरह बनाते हैं।
- चावल, गेहूं और मक्का की तरह, आलू की फसलें दुनिया के आहार का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं।
- आलू शब्द स्पेनिश शब्द पटाटा से आया है।
- आलू के पौधे आमतौर पर कीटों; जैसे भौंरों, से परागित होते हैं।
- आलू में विभिन्न प्रकार के विटामिन और खनिज होते हैं।
- स्वास्थ्य संबंधी चिंताओं के बावजूद, आलू के चिप्स दुनिया में सबसे आम स्नैक खाद्य पदार्थों में से एक हैं। हर वर्ष विश्वभर में इनके अरबों पैकेटों की खपत होती है।
- आयरलैंड में 1845 और 1852 के बीच पड़े अकाल के मुख्य कारणों में से एक आलू का रोग था, जिसे आलू ब्लाइट के नाम से जाना जाता था। आलू की कमी के कारण लगभग एक मिलियन लोगों की मृत्यु हो गई, जो खाद्य स्रोत के रूप में उन पर निर्भर थे।

- आलू में 20 प्रतिशत ठोस और 80 प्रतिशत पानी होता है।
- 100 ग्राम आलू में 75 ग्राम पानी, 19 ग्राम कार्बोहाइड्रेट (15 ग्राम स्टार्च और 2.2 ग्राम फाइबर), 2 ग्राम प्रोटीन, 0.1 ग्राम वसा और कई विटामिन (सी, ई, के, $बी_6$) और खनिज एवं धातु (मैग्नीशियम, फॉस्फोरस, पोटेशियम) पाया जाता है।
- औसत अमेरिकी प्रत्येक वर्ष 138 पाउंड आलू खाते हैं।
- प्रत्येक दिन अरबों लोग कम से कम एक आलू खाते हैं।
- आलू को बहुत अधिक समय तक अंधेरे में रखना उन्हें जहरीला बना सकता है।
- संयुक्त राष्ट्र संघ ने 2008 को आलू का वर्ष के रूप में मनाने की घोषणा की थी। इसका मकसद अफ्रीका और एशिया जैसे देशों में भुखमरी के खिलाफ भोजन के रूप में आलू को बढ़ावा देने की कोशिश थी।
- आलू में संतरे से ज्यादा विटामिन 'सी', केले से ज्यादा पोटेशियम और सेब से ज्यादा फाइबर होता है।
- आलू, संयुक्त राज्य अमेरिका के 50 राज्यों में उगाया जाता है, जिसमें सबसे अधिक उत्पादन इडाहो और वाशिंगटन में होता है।
- आयरलैंड में औसत व्यक्ति प्रतिवर्ष 120 कि.ग्रा. आलू खाता है। इटली में यह मात्रा केवल 30 कि.ग्रा. है। ■

आलू फसल की सस्य क्रियाएं

मनोज कुमार*, जागेश कुमार तिवारी और राजेश कुमार सिंह****

आलू की खेती के लिये सस्य क्रियायों की जानकारी का होना अत्यंत आवश्यक है। इसमें खेत की मृदा, खुदाई, बुआई, रोपण, इंटर कल्चर क्रियाएं, खरपतवार उन्मूलन इत्यादि शामिल हैं। सामान्य आलू की खेती में इस लेख में संक्षिप्त तौर परदी गई जाकारियों पर ध्यान देना जरूरी है।

वैश्विक आलू कॉन्क्लेव 2020

आलू की फसल के लिए मृदा बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि जड़ों के अलावा, कंद भी मृदा में विकसित होते हैं। थोड़ी अम्लीय पी-एच (5.5-7.5) के साथ अच्छी तरह से सूखी रेतीली दोमट मृदा आलू की खेती के लिए सबसे उपयुक्त है। इसके अलावा मृदा की उर्वरता, मृदा बनावट एवं संरचना, जुताई और सिंचाई भी महत्वपूर्ण है।

खेत की जुताई

आलू की फसल की रोपाई से पहले मृदा की गहराई पर खुदाई आवश्यक है और कंद के विकास के लिए महत्वपूर्ण भी है। पूर्वी मैदानों में धान और जूट जैसी फसलों के बाद भारी बनावट वाली मृदा में यह एक मुश्किल काम है। इसके लिए बड़े हल के साथ हैरोइंग की आवश्यकता होती है और उसके बाद प्लैंकिंग की जाती है। रेतीली दोमट या हल्की मृदा में जुताई की जा सकती है। जिन स्थानों पर हरी खाद की फसल (ढैंचा/सनहेम्प) उगायी जाती है, वहां जुताई को आलू रोपण से कम से कम 60 दिनों पहले करना पड़ता है। भाकृअनुप-केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान के क्षेत्रीय केन्द्र, मोदीपुरम, मेरठ में अध्ययनों से साबित हुआ है कि हरी खाद की फसल को खत्म करने के लिए एक गहरी जुताई और उसके बाद आलू की रोपाई से पहले एक हैरोइंग और प्लैंकिंग करना पर्याप्त है। विशेषकर पूर्वी मैदानों और पठारी क्षेत्रों में जहां भी संभव हो, रोगजनक और खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए ग्रीष्मकालीन जुताई का पालन किया जाना चाहिए। पहाड़ियों के खेतों में 5-10 प्रतिशत ढलान होना चाहिए और बारिश के पानी को अवशोषित करने के लिए खुला छोड़ देना चाहिए।

*भाकृअनुप-केंद्रीय आलू अनुसंधान केन्द्र, मोदीपुरम, मेरठ (उत्तर प्रदेश); **भाकृअनुप-केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला (हिमाचल प्रदेश)

आलू बुआई का समय

फसल की सर्वोत्तम उपज प्राप्त करने के लिए बुआई का समय बहुत महत्वपूर्ण है। इसके लिए किस्मों का चयन (छोटी, मध्यम और लंबी अवधि), मौसम (प्रारंभिक, मुख्य या देर से) और फसल प्रणाली महत्वपूर्ण हैं। आलू की खेती ज्यादातर मैदानी इलाकों में की जाती है इसलिए उत्तम रोपण का समय मुख्य रूप से तापमान पर निर्भर करता है। रोपण के समय लगभग 20-25 दिनों तक अधिकतम तापमान 32^0 सेल्सियस से कम होना चाहिए और न्यूनतम तापमान 20^0 सेल्सियस से कम होना चाहिए ताकि उचित पैदावार हो सके। विभिन्न क्षेत्रों के लिए आलू बुआई का समय इस तरह है: उत्तर-पश्चिम (1-10 अक्टूबर), पश्चिम-मध्य (15-25 अक्टूबर) तथा उत्तर पूर्वी मैदानी क्षेत्र (अक्टूबर के अंतिम सप्ताह से शुरू का नवंबर)। बसंत की फसल भी अतिरिक्त प्रबंधन और देखभाल के साथ मैदानी इलाकों में ली जाती है।

बीज का आकार और बीज दर

आलू की खेती में बीज सबसे महंगा आदान है। अन्य फसलों के विपरीत कंद के बीज का आकार खेती की लागत के साथ-साथ फसल की उत्पादन क्षमता पर महत्वपूर्ण असर डालता है। बीज का आकार न केवल पौधे की प्रारंभिक शक्ति को प्रभावित करता है बल्कि कंद से निकलने वाले तनों की संख्या पर भी असर डालता है। बड़े कंदों में आमतौर पर अधिक आंखें होती हैं, इसलिए ये अधिक उपज देते हैं। बड़े कंद के उपयोग से खेती की लागत ज्यादा होती है। सामान्यत: 30-50 ग्राम कंद को 60 सें.मी. (पंक्ति से पंक्ति) × 20 सें.मी. (पौधों से पौधों) की दूरी पर लगाया जाता है। पहाड़ियों में रोपण को ढलान के आर-पार किया जाना चाहिए। नीलगिरि पहाड़ियों में ग्रीष्मकालीन फसल 50 × 30 वर्ग सें.मी. और शरद ऋतु में सिंचित फसल 40 × 25 सें.मी. पर लगाई जाती है।

कंद का अंकुरण

अच्छी पैदावार पाने के लिए कंद का अंकुरण बहुत महत्वपूर्ण है। सामान्य रूप से

आलू खेती के विभिन्न कार्यकलाप

पोषक तत्वों का प्रबंधन

पोषक तत्व (एनपीके) प्रति यूनिट क्षेत्र और समय से अधिक होने से कंद का विकास तेजी से होता है। भारत में यूरिया सबसे सस्ता और आसानी से उपलब्ध होने वाला नाइट्रोजन का मुख्य स्रोत है, जिसका सबसे अधिक उपयोग किया जाता है। इसकी अमोनियम सल्फेट और कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट (कैन) की तुलना में 10-15 प्रतिशत कम उपयोग क्षमता है। अंकुरित कंद पर यूरिया का प्रतिकूल प्रभाव होता है इसलिए इसके प्रयोग से बचा जाना चाहिए। आसानी से उपलब्धता के कारण इसका उपयोग रोपण के समय किया जा सकता है। इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि यूरिया अंकुरण के सीधे संपर्क में न आए। नाइट्रोजन की उपयोग दक्षता को अधिकतम करने के लिए आधा नाइट्रोजन रोपण के समय और शेष आधा नाइट्रोजन मिट्टी चढ़ाने के समय करना चाहिए। आलू के लिए फॉस्फोरस के मुख्य स्रोत सिंगल सुपर फॉस्फेट या डीएपी उपयुक्त हैं। पोटेशियम का स्रोत म्यूरेट ऑफ पोटाश या सल्फेट ऑफ पोटाश है। रोपण के समय आधा नाइट्रोजन, पूरा फॉस्फरोस और पूरे पोटेशियम को संयुक्त रूप से मृदा में दिया जाता है। इसके अलावा मृदा की जांच करके अन्य पोषक तत्वों को दिया जाना चाहिए।

प्रक्षेत्र में आलू की फसल

कोल्ड स्टोरेज से आलू को निकालने के बाद 10-15 दिनों तक प्राकृतिक विसरित प्रकाश में लगभग 15^0-20^0 सेल्सियस पर स्टोर में रखने पर प्राप्त किया जा सकता है। यहां तक कि बड़े अंकुरण वांछनीय नहीं हैं। ये रोपण के दौरान बीज को संभालने के दौरान क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। कंदों को टोकरी, प्लास्टिक ट्रे, लकड़ी या फर्श पर एक पतली परत में फैलाया जा सकता है। पहाड़ी क्षेत्रों में बीजों को कोल्ड स्टोरेज में नहीं रखा जाता है, जबकि पिछले वर्ष के कंद प्राकृतिक विसरित प्रकाश के संपर्क में आने चाहिए।

सिंचाई

आलू एक उथली जड़ वाली फसल है, जिसमें लगभग 500-700 मि.मी. पानी की सिंचाई के लिए आवश्यकता होती है। सिंचाई का सबसे पारंपरिक तरीका फरो विधि है। इस विधि से सिंचित आलू की फसलें 30-50 प्रतिशत नाइट्रोजन, 10-15 प्रतिशत फॉस्फोरस और 40-45 प्रतिशत पोटेशियम उर्वरकों का उपयोग करती हैं। हाल के वर्षों में, ड्रिप सिंचाई सबसे महत्वपूर्ण सिंचाई पद्धति

आलू के कंद

सारणी 1. पूर्व रोपण जुताई के महत्वपूर्ण कार्य

क्षेत्र	कार्य
पहाड़ी क्षेत्र	1. अक्टूबर-नवंबर में बर्फ गिरने से पहले मोल्ड बोल्ड हल के बाद खेत की खुदाई कर छोड़ देना चाहिए ताकि बारिश या बर्फ पिघलने से पानी मृदा के अन्दर अवशोषित हो
	2. रोपण के लिए खेत की दो बार जुताई
मैदानी क्षेत्र	1. रोग-कीट और खरपतवार को नियंत्रित करने के लिए मई-जून में गर्म मौसम की गहरी जुताई
	2. हरी खाद की फसल बोने से 50-60 दिनों पहले खेत में दबाना
	3. रोपण के लिए खेत की तैयारी
	• दोमट मृदा के लिए एक जुताई और एक हैरोइंग पर्याप्त होती है
	• यदि मृदा दोमट हो और पिछली फसल धान या जूट हो तो अधिक जुताई और हैरोइंग की आवश्यकता होती
	• रेतीली या रेतीली दोमट मृदा में केवल जुताई और प्लाकिंग पर्याप्त है

सारणी 2. बीज का आकार, ज्यामिति, पौधों की संख्या और बीज दर

क्र.सं.	कंद आकार (ग्राम)	दूरी (सें.मी.)	पौधों की संख्या ('000/हैक्टर)	बीज दर (क्विंटल/ हैक्टर)	अन्य
1.	10-20	40×10	250.0	37.5	50 ग्राम से कम भार के कंद का अधिकतम उत्पादन, मैनुअल खेती से किया जा सकता है
2.	10-20	60×10	166.7	25.0	बड़े आकार के बीज आलू कंद का उत्पादन करने के लिए उत्तम
3.	20-40	60×15	111.1	33.0	
4.	40-60	60×20	83.3	42.0	आलू उत्पादन के लिए पौधों की संख्या 1 लाख/हैक्टर से अधिक होनी चाहिए और बीज दर को कम करने के लिए 50 ग्राम से बड़े कंदों को टुकड़ों में काटकर लगाया जा सकता है।
5.	60-80	60×25	66.7	47.0	
6.	80-100	60×30	55.6	50.0	
7.	>100	60×35	47.6	50.0	

आलू खुदाई

साबित हुई है। इस विधि में पौधे की जड़ों में पानी का धीमा उपयोग किया जाता है, जिससे पानी को बचाया जाता है। इस प्रणाली में आवश्यकतानुसार तरल उर्वरकों की आपूर्ति भी सक्षम है। पानी की निरंतर आपूर्ति से बेहतर पानी और उर्वरकों का उपयोग होता है। ड्रिप सिंचाई के तहत लगभग 50 प्रतिशत कम पानी की आवश्यकता होती है और 20-30 प्रतिशत अधिक कंद की उपज भी प्राप्त होती है। इस विधि में पानी का केवल 4-5 प्रतिशत तक नुकसान होता है, जबकि फरो विधि में 40-50 प्रतिशत तक पानी का नुकसान है।

फसल खुदाई

सामान्य आलू की खेती में फसल की खुदाई के बाद लगभग 25-45 टन प्रति हैक्टर कंद की प्राप्ति होती है। मैदानी क्षेत्रों में ज्यादा और पहाड़ी क्षेत्रों में कम पैदावार होती है। फसल खुदाई का समय विभिन्न बातों पर निर्भर करता है जैसे कि उपज का भंडारण किया जाना है या तुरंत बाजार में बेचना है। यदि खेत को खुदाई के बाद गेहूं, प्याज या ग्रीष्मकालीन मूंग/उड़द के लिए

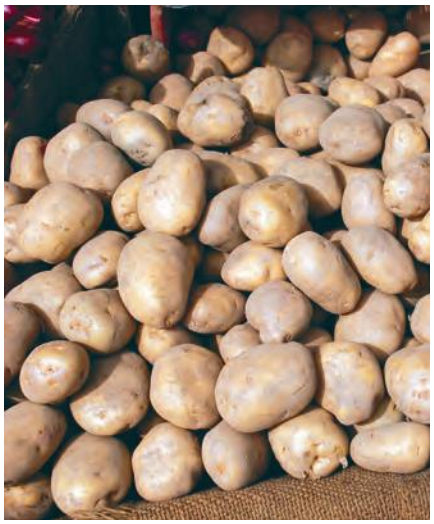

आलू की भरपूर पैदावार

उपयोग किया जाना है और कंद को बेचा जाना है, तो कंद की त्वचा मजबूत नहीं हो पाती है। कोल्ड स्टोर में रखने के लिए कंद की त्वचा का परिपक्व होना आवश्यक है। पहाड़ी क्षेत्रों में हाथ से जबकि मैदानी क्षेत्रों में मशीन से आलू की खुदाई होती है। हाथ से खुदाई में प्रति हैक्टर लगभग 110 श्रमिक प्रतिदिन लगते हैं। यांत्रिक कटाई के लिए एक या दो पंक्ति खुदाई करने वाले उपकरण उपलब्ध हैं, जिसमें पहले से ही निकले हुए कंदों को लेने और इकट्ठा करने के लिए श्रमिकों की आवश्यकता होती है। ■

कर्षण क्रियाएं

आलू की खेती में निराई (खरपतवार निकालना), गुड़ाई (होईंग) और मिट्टी चढ़ाना महत्वपूर्ण कर्षण क्रियाएं हैं, जिन्हें रोपण के एक महीने के भीतर किए जाने की आवश्यकता होती है। पूर्व-उद्भव खरपतवार के नियंत्रण के लिए रोपण के पांच दिनों के भीतर सिमजीन (0.5 कि.ग्रा./हैक्टर) या मेट्रिविजिन (0.75 कि.ग्रा./हैक्टर) का उपयोग किया जा सकता है। जबकि गुड़ाई और मिट्टी चढ़ाने को समय के भीतर पूरा किया जाना चाहिए, ताकि बढ़ते कंद को मिट्टी से ढका जा सके और सूरज की रोशनी

से बचाया जा सके। लगभग 20-25 दिनों में पौधों की ऊंचाई 10-15 सें.मी. तक हो जाती है और तब इन क्रियाओं को किया जाना चाहिए। पहाड़ियों में खरपतवार नियंत्रण और फसल के बेहतर विकास के लिए 40-45 दिनों में एक अन्य मिट्टी चढ़ाने की सलाह दी जाती है। मैदानी इलाकों में निराई के बाद मशीन या हाथ से गुड़ाई करके जड़ को एक या दो दिनों के लिए खुली हवा लगने के लिए छोड़ दिया जाता है। आधी नाइट्रोजन की मात्रा को पंक्ति के साथ फैलाया जाता है और फिर मिट्टी को ऊपर चढ़ाया जाता है। इसके एक या दो दिनों के बाद सिंचाई की जाती है।

सारणी 3. विभिन्न कृषि-जलवायु क्षेत्रों में आलू की सामान्य उर्वरक सिफारिश

कृषि-जलवायु क्षेत्र	प्रमुख मृदा का प्रकार	मात्रा (किलो/हैक्टर)		
		नाइट्रोजन	फॉस्फोरस	पोटेशियम
उत्तर-पश्चिमी पहाड़ियां	अम्लीय पहाड़ मृदा	120.150	100.150	120
उत्तर-पूर्वी पहाड़ियां	अम्लीय पहाड़ मृदा	100.120	120.150	60
उत्तर-पश्चिमी मैदानी क्षेत्र	जलोढ़ मृदा	180.240	80.100	100.150
पश्चिम केंद्रीय मैदानी क्षेत्र	जलोढ़ मृदा	180.240	80.100	100.150
उत्तर-पूर्वी मैदानी क्षेत्र	जलोढ़ मृदा	180.240	80.100	100.150
पठारी क्षेत्र	काली मृदा	100.120	60	60
दक्षिणी पहाड़ियां	अम्लीय पहाड़ मृदा	90.120	135.150	90

सारणी 4. आलू में सूक्ष्म पोषक तत्वों के अनुप्रयोगों की खुराक

सूक्ष्म पोषक तत्व	मृदा अनुप्रयोग (किलो/हैक्टर)	स्प्रे आवेदन (ग्राम/100 लीटर पानी)	कंद को डुबोना (ग्राम/100 लीटर पानी)
जिंक सल्फेट	25	200	50
फेरस सल्फेट	50	300	75
मैंगनीज सल्फेट	25	200	50
कॉपर सल्फेट	25	200	50
अमोनियम मॉलिब्डेट	2	100	20
सोडियम बोरेट	2	100	20

आलू बिजाई की उभरी क्यारी विधि

आधुनिक ड्रिप सिंचाई विधि के अंतर्गत उभरी चौड़ी गूलों वाली क्यारियों में दो या तीन पंक्तियों में आलू बुआई के लिए गूलों एवं नालियों की चौड़ाई क्रमश: 60×30 सें.मी. एवं 90×30 सें.मी. होनी चाहिए। आलू बिजाई की दोहरी पंक्ति में 20 सें.मी. की दूरी पर पंक्तियां बनाकर 15-20 सें.मी. की दूरी पर बीज कंदों की बुआई करें, जबकि तीन पंक्तियों वाली पद्धति में 20 सें.मी. के अंतराल पर पंक्तियों में 20 सें.मी. की दूरी पर 10 सें.मी. गहराई पर बीज कंदों की बिजाई करनी चाहिए।

टपक सिंचाई विधि से आलू उत्पादन

नेमसिंह*, **एम.सी. सूद** ** और **कुसुम सिंह** ***

आलू की फसल को लगभग 400-600 मि.मी. सिंचाई जल की आवश्यकता होती है। इसलिए पौधों में वृद्धिकाल के दौरान मृदा में उचित नमी के साथ-साथ पोषक तत्वों की उपलब्धता उपयुक्त स्तर पर बनाये रखने के लिए फसल को हल्की एवं लगातार सिंचाइयों की जरूरत होती है। यह फसल की प्रजाति, उगाने का समय एवं उद्देश्य, मृदा की संरचना एवं प्रकार तथा जलवायु इत्यादि पर निर्भर करती है। हमारे देश में लगभग 90 प्रतिशत आलू की खेती समतल मृदाओं में सिंचित दशाओं में की जाती है। परंपरागत कूंड़ सिंचाई विधि द्वारा आलू की खेती करने से जल उपयोग दक्षता 40-50 प्रतिशत तक ही होती है। वाष्पीकरण द्वारा जल की हानि एवं लीचिंग द्वारा पौधों के पोषक तत्वों विशेषत: नाइट्रेट की हानि को क्रमश: मल्चिंग एवं ड्रिप सिंचाई विधि अपनाकर नियंत्रित किया जा सकता है। आलू की पैदावार की गुणवत्ता मुख्यत: पौधों के जड़क्षेत्र में मृदा नमी एवं मृदा वायु के मध्य समुचित अनुपात पर निर्भर करती है जिसे उचित जल प्रबंधन द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

देश में आलू उत्पादन एवं उपयोग का तरीका तेजी के साथ बदल रहा है। इसलिए आलू की गुणवत्तापूर्ण उपज, जैसे बड़े आकार के चमकदार कंद, एक समान आकार एवं आकृति के आकर्षक कंद, बीज आलू उत्पादन, बेबी पोटेटो आदि पैदा करना अति आवश्यक होता जा रहा है। यह सूक्ष्म सिंचाई विधियों द्वारा खेती करने से संभव हो सकता है।

खेत में उचित नमी के अभाव में बुआई से पूर्व पलेवा अवश्य करें। यदि आलू बिजाई से पूर्व पलेवा नहीं किया गया है तो बिजाई के 2-3 दिनों के अंदर कूंड़ विधि से सिंचाई करना अनिवार्य है। इस तरह पौधों के विकास के लिए खेत में पानी की कमी हानिकारक होती है, उसी प्रकार मिट्टी में नमी की अधिकता होने से, मृदा में वायु का प्रवेश कम हो जाता है। इससे पौधों को श्वसन के लिए पर्याप्त ऑक्सीजन नहीं मिल पाती है। ऐसी परिस्थितियों में पौधों में रोग बढ़ जाते हैं तथा कंद एवं जड़ें सड़कर नष्ट हो जाती हैं। खेत में फसल के एक समान एवं शीघ्र अंकुरण के लिए कूंड़ सिंचाई विधि से पहली सिंचाई आलू बिजाई के 8-10 दिनों के अंतर्गत अवश्य करनी चाहिए। इसके बाद फसल से अच्छी पैदावार लेने के लिए बलुई दोमट व दोमट मृदाओं में 7-10 दिनों तथा भारी मृदाओं में 10 से 12 दिनों के अंतराल पर कूंड़ सिंचाई विधि द्वारा हल्की सिंचाई करना अनिवार्य है। सिंचाई करते समय ध्यान रखें कि आलू की गूलें दो-तिहाई से अधिक न डूबें अन्यथा पानी की अधिकता के कारण मृदा की ऊपरी सतह के रंध्र (बारीक छेद) बंद हो जाते हैं, जिससे आलू की पैदावार प्रभावित होती है। आलू की फसल में नियमित हल्की सिंचाइयां करके उचित नमी बनाये रखना अति आवश्यक है।

टपक सिंचाई विधि

भाकृअनुप-केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान-क्षेत्रीय केन्द्र, मोदीपुरम पर सिंचाई की आधुनिक पद्धतियों का कूंड़ सिंचाई विधि से तुलनात्मक अध्ययन किया गया। परीक्षणों के परिणाम दर्शाते हैं कि ड्रिप सिंचाई विधि परंपरागत सिंचाई की अपेक्षा अधिक प्रभावी है। ड्रिप सिंचाई विधि के अंतर्गत खेत में निर्धारित ले-आउट में बिछाये गए एलडीपीई से निर्मित 16 मि.मी. बाह्य व्यास वाले ड्रिप लेटरल्स पर 30 सें.मी. की दूरी पर स्थित 1.5 से 2.0 लीटर प्रति घंटा जल बहाव (डिस्चार्ज) वाले (0.8-1.0 कि.ग्रा. प्रति वर्ग सें.मी. दाब पर नान पी.सी तथा 1.0-2.5 कि.ग्रा. प्रति वर्ग सें.मी. दाब पर पी.सी.) ड्रिपर्स से जल को बूंद-बूंद करके पौधों के जड़क्षेत्र में पहुंचाया जाता है। आलू की परंपरागत बिजाई के अंतर्गत ड्रिप सिंचाई पद्धति द्वारा 125-150 प्रतिशत सीपीई (वाष्पीकृत जल स्तर) पर 35-45 मिनट तथा आलू बिजाई की उभरी क्यारियों में चौड़ी गूलों पर दोहरी व तीन पंक्ति विधि के लिए 70-90 मिनट तक एक

*भाकृअनुप-केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, मोदीपुरम, मेरठ (उत्तर प्रदेश); **भाकृअनुप-केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला (हिमाचल प्रदेश); ***भाकृअनुप-केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान-क्षेत्रीय केन्द्र, मोदीपुरम, मेरठ (उत्तर प्रदेश)

दिन के अंतराल से सिंचाई करें। उर्वरीकरण के अंतर्गत फसल में एनपीके उर्वरकों की 1/3 मात्रा बिजाई के समय खेत में डालें तथा उर्वरकों की शेष 2/3 मात्रा को आठ बार में सप्ताह में दो बार सिंचाई जल के साथ-साथ ड्रिप विधि से पौधे निकलने के उपरांत अर्थात बिजाई के तीन सप्ताह बाद शुरू करके बिजाई के लगभग 50 दिनों बाद तक फसल को देनी चाहिए।

ड्रिप सिंचाई विधि से आलू उत्पादन

आलू बिजाई की परंपरागत विधि

इस विधि में प्रत्येक नाली एवं मेड़ की चौड़ाई 30 सें.मी. होती है, तथा बीज आलू को गूलों में 60×20 सें.मी. के अंतराल पर 10 सें.मी. गहराई में बोया जाता है। ड्रिप सिंचाई विधि से परंपरागत कूंड़ सिंचाई विधि की तुलना में पानी की लगभग 40 प्रतिशत तक बचत के साथ-साथ, 15-20 प्रतिशत तक आलू की अधिक उपज प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त 25-30 प्रतिशत तक बड़े आकार के अच्छी गुणवत्तायुक्त कंदों की पैदावार प्राप्त हो सकती है। इसके अतिरिक्त आलू में शुष्क पदार्थ की अधिक मात्रा, कंदों की संख्या तथा वजन प्रति पौधा एवं प्रति इकाई क्षेत्र अधिक प्राप्त होता है।

बिजाई की दोहरी पंक्ति विधि

ड्रिप सिंचाई के अंतर्गत उभरी क्यारी की चौड़ी गूलों में 120 सें.मी. की दूरी पर एकल ड्रिप लेटरल्स के साथ दो पंक्तियों में 20 सें.मी. के अंतराल पर 15-20 सें.मी. की दूरी पर (83,333 से 1,11,111 पौधे/हैक्टर) रखते हुए बीज कंदों की बुआई करने से परंपरागत कूंड़ सिंचाई विधि के तहत आलू बिजाई की तुलना में 15-20 प्रतिशत आलू की अधिक पैदावार प्राप्त होती है। यही नहीं 90 सें.मी. की दूरी पर बिजाई की दोहरी पंक्ति विधि के अंतर्गत 20 सें.मी. की दूरी पर लाइनों में 20 सें.मी. के अंतराल पर (1,11,111 पौधे/हैक्टर) रखते हुए बीज कंदों की 10 सें.मी. गहरी बिजाई करने से कूंड़ सिंचाई विधि के तहत परंपरागत बुआई की अपेक्षा लगभग 15-25 प्रतिशत आलू की अधिक उपज प्राप्त होती है। इसी प्रकार मध्यम (25-75 ग्राम) आकार के कंदों की पैदावार में भी बढ़ोतरी पाई गई।

उन्नत आलू फसल

ड्रिप सिंचाई एवं फर्टिगेशन

ड्रिप सिंचाई विधि से पौधों के लिए जल एवं पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ती है। इस विधि के अंतर्गत फसल वृद्धि के दौरान मृदा की ऊपरी सतह में नमी फील्ड कैपेसिटी पर उपलब्ध रहती है। मृदा की भौतिक दशाओं में सुधार होने के कारण पौधों की जड़ एवं कंदों का समुचित विकास होता है, जिससे कंदों की संख्या एवं गुणवत्ता में वृद्धि होती है तथा अधिक पैदावार प्राप्त होती है। उर्वरीकरण (फर्टिगेशन) तकनीकी हाल ही में विकसित की गयी है, जो कि गुणवत्तायुक्त फसल उत्पादन के लिए बहुत उपयोगी है। फर्टिगेशन के अंतर्गत सप्ताह में दो बार सिंचाई जल के साथ-साथ एन.पी.के. उर्वरकों का पौधों के जड़क्षेत्र में प्रयोग करते हैं। इससे जल एवं उर्वरक उपयोग क्षमता में वृद्धि होती है तथा फसल की उत्पादकता सर्वोत्तम रहती है। इसके कारण टपक विधि से सिंचाई करना आलू उत्पादकों के लिए बहुत लाभप्रद होता है।

जल बहाव दर गणना

टपक सिंचाई के लिए समय का निर्धारण ड्रिप सिस्टम के आकार तथा जल बहाव (डिस्चार्ज) क्षमता पर निर्भर करता है, जिसकी गणना निम्नलिखित सूत्र द्वारा की जा सकती है:

$$\text{सिंचाई दर (हैक्टर मि.मी./घंटा)} = \frac{\text{पानी का डिस्चार्ज/जल बहाव (लीटर प्रति घंटा)}}{\text{दो ड्रिपर्स के बीच दूरी} \times \text{सिस्टम की दो पंक्तियों के मध्य दूरी (मीटर में)}}$$

ड्रिप सिंचाई प्रणालीयुक्त आलू के खेत

बिजाई की तीन पंक्ति विधि

ड्रिप सिंचाई विधि के अंतर्गत उभरी क्यारी की चौड़ी गूलों पर 120 सें.मी. की दूरी पर एकल ड्रिप लेटरल्स के साथ तीन पंक्तियों में 20 सें.मी. के अंतराल पर 20 सें.मी. की दूरी पर (1,25,000 पौधे/हैक्टर) रखते हुए बीज कंदों की 10 सें.मी. गहरी बुआई करने से कूंड़ सिंचाई विधि के तहत परंपरागत आलू बुआई की तुलना में लगभग 15-25 प्रतिशत आलू की अधिक पैदावार प्राप्त होती है। इसी प्रकार मध्यम (25-75 ग्राम) आकार के कंदों की उपज भी अधिक प्राप्त होती है जिनका प्रयोग बीज आलू के लिए किया जा सकता है।

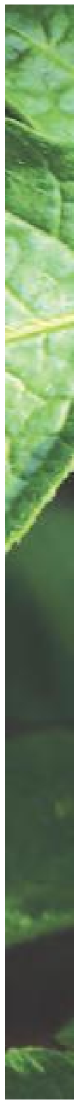

आलू के प्रमुख विषाणुजनित रोग एवं निदान

रविन्द्र कुमार*, राहुल कुमार तिवारी*, संजीव शर्मा और एस.के. चक्रबर्ती*

भारत में आलू पहाड़ी एवं मैदानी दोनों भागों में एक महत्वपूर्ण फसल है। आलू में लगने वाले रोग मुख्यत: फफूंद, जीवाणु एवं विषाणु द्वारा उत्पन्न होते हैं, जो खाद्य आलू के साथ-साथ बीज आलू की उत्पादकता एवं गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव डालते हैं। आलू की वानस्पतिक प्रसारित फसल होने के कारण यह बीज गुणवत्ता में कमी के लिए बहुत ही सुग्राही मानी जाती है, क्योंकि इसके कई विषाणु, बीज ट्यूबर में बने रहते हैं। बार-बार विषाणुग्रसित बीज आलू बोने से विषाणु का गुणन होता रहता है। इसके परिणामस्वरूप बीज आलू की पैदावार क्षमता ही कम नहीं होती बल्कि आलू का आकार, रंग एवं गुणवत्ता का भी ह्रास होता रहता है। बीज आलू गुणवत्ता में कमी के कारण दुनिया भर में आलू उत्पादकों के लिए एक लंबे समय से आलू उत्पादन में चुनौती उत्पन्न हो रही है। भारत जैसे विकासशील देश में छोटे पैमाने पर किसानों तक गुणवत्ता वाला बीज आसानी से नहीं पहुंच पा रहा है। बीज गुणवत्ता में कमी के कारण 3-4 वर्ष बाद बीज आलू को बदलना जरूरी हो जाता है, जो बीज आलू की कमी के कारण संभव नहीं हो पा रहा है। देश में बीज आलू गुणवत्ता में कमी के कारणों पर अध्ययन से पता चला है कि एफिड एवं सफेद मक्खी खेतों में विषाणु रोगों के प्रसार के लिए जिम्मेदार हैं। दूसरा वर्ष दर वर्ष उपयोग किए जाने वाले एक ही बीज आलू स्टॉक के कारण बीज आलू में विषाणुओं का संचय होता रहता है। विषाणु से संक्रमित बीज आलू खेत में बोने से एफिड एवं सफेद मक्खी विषाणु आसानी से स्वस्थ आलू को प्रभावित करते रहते हैं। इसके कारण बीज आलू का आकार, गुणवत्ता एवं क्षमता में लगातार कमी होती रहती है। इसके साथ ही साथ ग्लोबल वार्मिंग के कारण तापमान बढ़ने से लगातार इन कीटों की संख्या में भारी बढ़ोतरी हो रही है, जिससे ये कीट ज्यादा विषाणु प्रसारित कर रहे हैं।

भारत में आलू की फसल को संक्रमित करने के कारक *आलू का शीर्ष पत्ती मोड़क विषाणु, आलू का पत्ती मोड़क विषाणु, पोटेटो विषाणु* Y, *पोटेटो विषाणु* S, *पोटेटो विषाणु* X, *पोटेटो विषाणु* A, *पोटेटो विषाणु* N एवं *टोस्पोवायरस* प्रमुख विषाणु रोग हैं। अकेले इनमें से कोई भी विषाणु पैदावार को कम करने की क्षमता रखता है, लेकिन ज्यादातर ये विषाणु संयुक्त रूप से पाये जाते हैं। इससे बीज आलू की उपज में तीन-चार वर्ष के अंतराल में ही 50 प्रतिशत तक पौधों की वृद्धि एवं कंद की पैदावार में कमी हो जाती है। इस भयावह स्थिति में किसानों को पर्याप्त लागत लगाने के बावजूद आलू का कम उत्पादन प्राप्त होता है तथा अत्यधिक

*भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला (हिमाचल प्रदेश)

आलू के शीर्ष पत्ती मोड़क विषाणु से संक्रमित पौधा

आर्थिक नुकसान झेलना पड़ता है। यदि खाद्य सुरक्षा को इस देश में बनाये रखना है, तो आलू की अधिकतम उपज को प्राप्त करना होगा, जिसके लिए जरूरी है कि बीज आलू की गुणवत्ता में कमी को रोका जाए तथा उच्च कोटि के बीज किसानों को उपलब्ध करवाए जाएं। इससे किसान अधिक उत्पादन कर अर्थव्यवस्था में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं।

विश्वभर में प्राकृतिक अवस्था में विषाणुओं की 25-30 प्रजातियां अलग-अलग रूप में आलू की पत्तियों, डंठलों एवं कंदों को संक्रमित करती हैं। आमतौर पर ये बेहद घातक होती हैं तथा पौधों के स्वरूप एवं पैदावार क्षमता को कम कर देती हैं। इन विषाणुओं के संक्रमण के लक्षण भी अलग-अलग होते हैं। रोगरहित आलू बीज उत्पादन करने के लिए भारत में पाए जाने वाले प्रमुख विषाणुओं के लक्षण एवं बचाव के उपायों का वर्णन यहां पर किया गया है। बीज उत्पादन करते समय यदि इन्हें ध्यान में रखा जाए तो बीज की गुणवत्ता में कमी को रोककर स्वस्थ बीज आलू पैदा किया जा सकता है।

आलू का शीर्ष पत्ती मोड़क विषाणु

आलू का शीर्ष पत्ती मोड़क एक नवीन वायरस है जो सफेद मक्खी द्वारा संचारित होता है। इसके प्रभाव से पौधों की शीर्ष पत्तियां मुड़ जाती हैं। यह हरियाणा, पंजाब, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, ओडिशा, बिहार और पश्चिम बंगाल में सफेद मक्खियों की संख्या से सकारात्मक रूप से प्रभावित होता है। प्रभावित पौधों की ऊपरी पत्तियां टेढ़ी-मेढ़ी तथा एक साफ मोजैक लक्षण लिए हुए दिखाई देती हैं। बाद में धीरे-धीरे पूरा पौधा विकृत और छोटा दिखाई देता है तथा यह लक्षण आसानी से पहचाना जा सकता है। कभी-कभी पत्ते ऐसे दिखाई देते हैं जैसे आलू विषाणु M (पीवीएम) की वजह से रोलिंग होती है। यह रोग सफेद मक्खियों से फैलता है। ये बड़ी तेजी से उड़ती हैं और जहां से भोजन प्राप्त करती हैं वहां पर प्राथमिक और द्वितीयक संक्रमण

आलू का पत्ती मोड़क विषाणु

उष्णकटिबंधीय इलाकों में आलू का पत्ती मोड़क वायरस रोग संभवतः सबसे पुराना रोग है। इससे फसल को सबसे अधिक नुकसान पहुंचता है। इस विषाणु से आलू की फसल का नुकसान 20-30 प्रतिशत आमतौर पर देखा गया है। रोग के लक्षण पौधों में

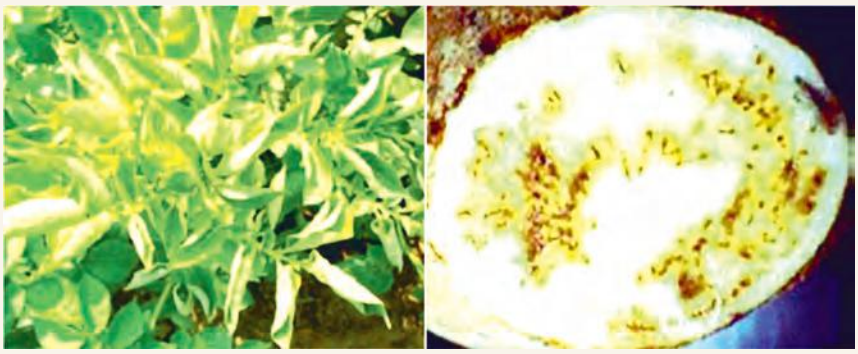

आलू के पत्ती मोड़क विषाणु रोग से प्रभावित पौधा एवं कंद

ग्रसन की प्राथमिक या द्वितीय अवस्था तथा आलू की किस्म पर निर्भर करते हैं। प्राथमिक ग्रसन के लक्षण फसलावधि में ही विकसित हो जाते हैं। इससे आलू की कुछ किस्मों के पौधों की ऊपरी पत्तियां धीरे-धीरे मुड़ना शुरू हो जाती हैं, जो बाद में हल्की पीली पड़ जाती हैं। आलू की कुछ किस्मों की ऊपरी पत्तियों के किनारे भी लाल या बैंगनी हो जाते हैं। द्वितीय संक्रमण के लक्षण केवल पिछले फसलकाल में वायरसग्रसित पौधों के कंदों से उगाई गई फसल में दिखाई पड़ते हैं तथा पुरानी पत्तियों पर अधिक स्पष्ट होते हैं। ग्रसित पौधों की पत्तियां चर्म की तरह कड़ी हो जाती हैं और पौधे बौने रह जाते हैं। इस रोग के प्रकोप से छोटे से मध्यम आकार के बहुत कम कंद पैदा होते हैं। यह रोग कंदों तथा माहूं द्वारा फैलता है। इनका प्राथमिक संक्रमण प्रायः माहूं द्वारा आसपास के खेतों से या खेत में ही ग्रसित आलू कंदों से स्वयं पैदा हुए रोगी पौधों से होता है। यदि संक्रमित बीज कंदों से बार-बार फसल उगाई जाए तो किस्म का बीज विकारी हो जाता है।

पोटेटो विषाणु-एक्स के लक्षण

पोटेटो वायरस-एम से संक्रमित फसल

तीव्रता से एक ही फसल मौसम में कर देती हैं। इस रोग से सुग्राही किस्मों की अगेती फसल की पैदावार में 30-40 प्रतिशत तक नुकसान हो जाता है। कुफरी बहार किस्म आलू के शीर्ष पत्ती मोड़क विषाणु की कुछ हद तक प्रतिरोधक है।

पोटेटो विषाणु X

सामान्यत: पोटेटो विषाणु X के लक्षण दिखाई नहीं देते। इससे हरिमाहीनता, मोजैक और पत्तियों का आकार छोटा रह जाता है। पीवीएक्स वायरस पीवीवाई और पीवीए के साथ मिलकर क्रिया करके तीव्र मोजैक के लक्षण उत्पन्न करते हैं, जिससे पैदावार में 10-20 प्रतिशत कमी होती है। संचरण मुख्यत: मशीनों द्वारा होता है। यंत्रों या मशीनों द्वारा कृषि-क्रियाएं करते समय मशीनों को खेतों में ले जाते समय मशीनों द्वारा चिपके विषाणु पौधों से चिपक जाते हैं।

पोटेटो विषाणु A

इस विषाणु से भी मोजैक लक्षण पैदा होते हैं। ये पत्ती क्षेत्र में शिरारहित धब्बों के रूप में प्रकट होते हैं। द्वितीयक संक्रमण में इसके लक्षण अधिक सुस्पष्ट होते हैं। इसके परिणामस्वरूप पत्तियों पर शीशे की तरह चमकदार उभरे हुए फफोले बन जाते हैं। यदि पीवीवाई के साथ या पीवीएक्स के साथ मिश्रित संक्रमण हो तो लक्षण तीव्र होते हैं। इससे पैदावार में 15 प्रतिशत तक नुकसान होता है। रोग, कंदों तथा माहूं *(माइजस परसीकी)* द्वारा फैलता है। इनका प्राथमिक संक्रमण प्राय: वायरसवाहक माहूं द्वारा आसपास के खेतों से या खेत में ही ग्रसित आलू कंदों से स्वयं पैदा हुए रोगी पौधों से पनपता है। माहूं अल्पावधि के लिए विषाक्त रहता है।

पोटेटो विषाणु S

इस विषाणु के कारण पर्णक हल्के या कम होते हैं तथा पत्तियों की शिराएं गहरी हो जाती हैं। पत्ती के आकार में कमी या पत्तियों का आकार छोटा हो जाता है एवं पत्तियों पर भूरे धब्बे पड़ जाते हैं। इससे पैदावार में 10-40 प्रतिशत तक कमी होती है। रोग कंदों तथा माहूं द्वारा फैलता है। इनका प्राथमिक संक्रमण प्राय: वायरस वाहक माहूं द्वारा आसपास के खेतों से या खेत में ही ग्रसित आलू कंदों से स्वयं पैदा हुए रोगी पौधों से पनपता है।

पोटेटो विषाणु M

कुछ किस्मों में पीवीएम के लक्षण दिखाई नहीं देते या अप्रकट होते हैं। लहरदार पर्णकों के किनारे सहित पत्तियों में मोड़क, हरिमाहीनता, क्रिकंल और विकार आ जाता है।

आलू का डंठल क्षय रोग

मोजैक (संयुक्त वायरल संक्रमण)

पोटेटो वायरस X, X + X या PVX + A + Y + M या PVX, Y+A + M जैसे वायरसों से संयुक्त रूप से गुच्छा रोग से संक्रमित पौधा

विश्व में विषाणुओं का संयुक्त संक्रमण सामान्य रूप से होता रहता है। भारत में महत्वपूर्ण विषाणु संक्रमणों में वायरस X, S, Y और M हैं। पीवीएक्स, पीवीएस और पीवीए के संयुक्त संक्रमण से पत्तियों के लहरदार किनारों पर सिलवटों सहित धब्बे दिखाई देते हैं। इसके अलावा पौधों की बढ़वार रुक जाती है, पत्तियों पर चितकबरे धब्बे पड़ जाते हैं और पर्णकों पर धारियां पड़ जाती हैं। अन्य विषाणुओं के साथ मिलकर पीवीए द्वारा अंत: शिराएं और अंत: हरिमहीनता, थोड़े चितकबरे और कई किस्मों की पत्तियों में हल्की सिलवटें पैदा कर देते हैं। पीवीएक्स और पीवीवाई के संयुक्त प्रभाव से झुर्रीदार लक्षण दिखाई देते हैं, जिसकी वजह से पौधों की बढ़वार रुक या अवरुद्ध हो जाती है और पत्तियां झुक जाती हैं या निचली पत्तियों की शिराओं में क्षय और पत्तियों में तीव्र मोजैक हो जाता है। अंतत: पौधों से छोटे आकार के कंद पैदा होते हैं।

पोटेटो विषाणु Y

पत्तियों एवं कंद पर पोटेटो विषाणु के विभिन्न प्रभेदों से उत्पन्न लक्षण

इस विषाणु से सामान्य मोजैक उत्पन्न होता है। इस विषाणु के विभिन्न प्रभेद आलू को ग्रसित करते हैं तथा उनका प्रकोप भी अलग-अलग पहचाना जा सकता है। पीवीआई के सामान्य प्रभेद को पीवीवाई के नाम से जाना जाता है, जो पट्टियों पर मोजैक उत्पन्न करता है। प्रभेद पीवीवाई पत्तियों पर बिंदु धारियां तथा पीवीवाई पत्तियों का क्षय करता है। पीवीवाई प्रभेद से कंद क्षय सहित तीव्र लक्षण होते हैं। प्राथमिक संक्रमण की अपेक्षा द्वितीय संक्रमण अधिक तीव्र होते हैं। पीवीवाई प्रभेद पीवीएक्स और पीवीए के साथ पारस्परिक क्रिया करके पैदावार में बहुत अधिक नुकसान पहुंचाते हैं। इससे पैदावार में 10-80 प्रतिशत तक नुकसान हो सकता है। रोग, कंदों तथा माहूं *(माइजस परसीकी)* द्वारा फैलता है तथा प्राथमिक संक्रमण प्राय: माहूं द्वारा आसपास के खेतों से या खेत में ही ग्रसित आलू कंदों से स्वयं पैदा हुए रोगी पौधों से पनपता है। माहूं अल्पावधि के लिए विषाणु को अपने अंदर बनाए रखता है तथा तेजी से प्रसार करता रहता है।

पोटेटो विषाणु-ए से संक्रमित पौधा

पोटेटो विषाणु-एस से प्रभावित पौध

इससे पैदावार में 10-20 प्रतिशत तक कमी होती है। रोग कंदों तथा माहूं द्वारा फैलता है। इनका प्राथमिक संक्रमण प्रायः विषाणु वाहक माहूं द्वारा आसपास के खेतों से या खेत में ही ग्रसित आलू कंदों से स्वयं पैदा हुए रोगी पौधों से पनपता है। माहूं अल्पावधि के लिए विषाक्त रहता है।

आलू का डंठल क्षय रोग

आलू का डंठल क्षय रोग भारत के मध्य और मध्य पश्चिमी इलाकों में आलू की अगेती फसल की मुख्य समस्या है। इससे आलू फसल का नुकसान समय व स्थानानुसार 15-30 प्रतिशत के बीच तक हो जाता है। रोग के लक्षणों में पत्तियों और डंठलों पर उत्तकक्षयी और हरिमाहीनता धब्बों सहित शिराओं का क्षय, पत्तियों का मुरझाना या लटकना, प्रभावित डंठलों में वलयी छल्ले और डंठलों में दरारें बनती हैं। टोस्पोवायरस के बारे यह माना जाता है कि यह थ्रिप्स या काष्ठकीट द्वारा स्थायी रूप से संचारित होता है। काष्ठकीट, वायरस को शिशुकीट के रूप में ग्रहण करता है और पूरे जीवनकाल में इसे संचारित करता है।

आलू का डंठल क्षय रोग

एकीकृत विषाणु रोग प्रबंधन

- आलू के विषाणुओं की रोकथाम के लिए हमेशा रोगमुक्त बीज किसी विश्वसनीय स्रोत से प्राप्त कर ही बिजाई करें।
- आलू की बिजाई हमेशा सफेद मक्खी एवं माहूंमुक्त अवधि के दौरान ही करनी चाहिए तथा खेत को खरपतवारों से मुक्त रखें।
- बिजाई एवं खुदाई के समय में हमेशा समायोजन रखें। बिजाई से पहले बीज कंदों को एमिडाक्लोप्रिड 4 मि.ली. प्रति 10 लीटर के घोल में उपचारित करें।
- नीम से तैयार कीटनाशकों एवं जैव नियंत्रकों जैसे वानस्पतिक उपायों को अपनायें तथा रासायनिक कीटनाशकों का आवश्यकतानुसार ही प्रयोग करें।
- मिट्टी चढ़ाते समय पौधों की सतह के पास 15 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से फोरेट 10 जी डालें।
- पौधों के निकलने के समय एवं 30 दिनों की खड़ी फसल में 3 मि.ली. इमिडाक्लोप्रिड प्रति 10 लीटर की दर से छिड़काव करें।
- 50 दिनों की खड़ी फसल में दूसरे एकांतर कीटनाशक जैसे थाईमेथॉक्साम 25 डब्ल्यू.जी. का 0.05 प्रतिशत की दर से छिड़काव करें।
- कम से कम 30, 50 एवं 70 दिनों की फसल में रोगी एवं बेमेल पौधों को कंद जड़ सहित उखाड़ें और नष्ट कर दें।
- 70 दिनों की खड़ी फसल में डाईमेथोएट 30 ई.सी. का 1 लीटर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।
- माहूं संख्या प्रति 100 संयुक्त पत्तियों पर 20 तक पहुंचने से पूर्व बीज फसल के तने काट दें। खुदाई से 8-10 दिनों पहले छिलकों को मजबूत होने दें।
- खुदाई एवं लदाई के दौरान कंदों को चोट लगने या क्षतिग्रस्त होने से बचाएं। आलू का भंडारण सही समय एवं सही तरह से करें। ■

लेखकों से आग्रह

लेखक बंधु *फल फूल* पत्रिका के लिए अपने लेख और संबंधित फोटो, कवरिंग लैटर के साथ सिर्फ ई-मेल पर ही भेजें। ध्यान रखें कि फोटो जेपीजे फॉर्मेट में और उच्च रेज्योल्यूशन की हों। लेख में अधिकतम 1200 शब्दों की सीमा रखने का प्रयास करें। इसके अतिरिक्त सुझाव और प्रतिक्रियाएं भी ई-मेल के माध्यम से भेज सकते हैं। भेजने के लिए कृपया कृतिदेव 010 टाइप फेस का प्रयोग करें।

हमारा ई-मेल पता है : phalphul@gmail.com

—संपादक

आलू में कवचधारी सूत्रकृमि का उन्मूलन

आरती बैरवा*, संजीव शर्मा*, वेंकटासलम ई.पी., प्रियंक हनुमान महात्रे**, कैलाश चन्द्र नागा** और सुभाष एस.***

हमारे देश में आलू की खेती एक प्रमुख फसल के रूप में की जाती है। यह सच है कि विभिन्न रोगों तथा कीटों के कारण इसकी खेती प्रभावित हो रही है। आलू के प्रमुख कीटों में पोटेटो सिस्ट नेमोटोड का बहुत महत्व है। इसे पुटी कृमि या सुनहरे सूत्रकृमि या कवचधारी सूत्रकृमि के नाम से भी जाना जाता है। यह भारत सहित दुनिया के कई देशों में आलू के उत्पादन को प्रभावित करने वाले खतरनाक कीटों में से एक है। एक उपयुक्त परपोषी पौधे के अभाव में ये सूत्रकृमि मिट्टी में लंबे समय तक जीवित रहते हैं। अपने अद्‌भुत छोटे आकार के कारण किसानों, वैज्ञानिकों और कृषि नीति निर्माताओं के लिए यह एक चुनौती बन गया है। आज के समय में आलू के घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय के लिए कवचधारी सूत्रकृमि एक गंभीर खतरे का रूप ले चुका है।

दक्षिण अमेरिका के एंडिस पर्वत आलू तथा कवचधारी सूत्रकृमि की उत्पत्ति के स्थल माने जाते हैं। वर्ष 1850 में पुटी कृमि, आलू की ब्लाइट प्रतिरोधक किस्मों के साथ दक्षिण अमेरिका से यूरोप में फैला था। फिर यूरोप से बीज कंद तथा प्रजनन सामग्री के साथ दुनिया के अन्य देशों में फैल गया। इसलिए यूरोप को कवचधारी सूत्रकृमि का द्वितीयक वितरण केंद्र माना जाता है। एक धारणा है कि कवचधारी सूत्रकृमि द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान भोजन और सैन्य उपकरणों के प्रवेश के साथ एशियाई देशों के कई हिस्सों में फैल गया था।

वर्ष 1961 में युनाइटेड किंग्डम के डा. एफ.जी.डब्ल्यू. जोन्स, तमिलनाडु के उदागमंडलम, नीलगिरि जिले में भ्रमण पर आए थे। उस दौरान उन्हें पहली बार समुद्र तल से 7000 फीट की ऊंचाई पर तमिलनाडु के विजयनगरम क्षेत्र में आलू की पीली फसल दिखाई दी तथा पौधे की जड़ों पर गोल सुनहरे रंग के सिस्ट मिले। इस तरह डा. जोन्स को कवचधारी सूत्रकृमि के होने का पता चला। इसके बाद तमिलनाडु की कोडाईकनाल पहाड़ियों में (वर्ष 1983) तथा तमिलनाडु की सीमा से जुड़े केरल के पश्चिमी घाट के सर्वेक्षण के दौरान, आलू के कई खेतों में कवचधारी सूत्रकृमि के व्यापक प्रसार के बारे में जानकारी मिली।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद एवं तमिलनाडु सरकार द्वारा संयुक्त रूप से वित्तपोषित 'गोल्डन नेमोटोड स्कीम' की शुरूआत अक्टूबर 1963 में की गई, जिसके

*भाकृअनुप केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला; **भाकृअनुप केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान केन्द्र, ऊटी (तमिलनाडु)

कवचधारी सूत्रकृमि का क्षेत्र में प्रारंभिक लक्षण

तहत आलू के गोदामों और खेतों का बड़े पैमाने पर निरीक्षण किया गया। इस निरीक्षण के बाद यह पता चला कि कवचधारी सूत्रकृमि मुख्य रूप से तमिलनाडु के नीलगिरि और कोडाईकनाल की पहाड़ियों तक ही सीमित हैं। नीलगिरि और कोडाईकनाल की पहाड़ियों से कवचधारी सूत्रकृमि के नए क्षेत्रों में प्रसार को रोकने के लिए वर्ष 1971 में घरेलू संगरोध लगाया गया था। इस घरेलू संगरोध के कारण तमिलनाडु राज्य के बाहर अन्य

कवचधारी सूत्रकृमिग्रसित क्षेत्र

कवचधारी सूत्रकृमि का प्रसार

- मिट्टी के फैलाव से
- कवचधारी सूत्रकृमि प्रभावित क्षेत्रों के आलू के बीज को नये क्षेत्रों में बोने से
- सिंचाई और वर्षा के पानी से
- कवचधारी सूत्रकृमि प्रभावित क्षेत्र में प्रयुक्त कृषि उपकरणों के क्षेत्र में के प्रयोग से
- पशुओं के खुरों और श्रमिकों के जूतों से
- उपयोग में लिए जा चुके बोरों के माध्यम से जिनमें कवचधारी सूत्रकृमि संक्रमित क्षेत्र से लाए गए आलू पहले से संग्रहीत किए गए हों

लक्षण

- प्रारंभ में हल्के पीले रंग के संक्रमित पौधे छोटे-छोटे खंडों में खेत में देखे जाते हैं। पौधों में ये लक्षण पोषक तत्वों की कमी से होने वाले लक्षणों के समान दिखाई देते हैं।
- दिन की गर्मी में ये संक्रमित पौधे अस्थाई रूप से कमजोर और सूखे पड़ जाते हैं।
- कवचधारी सूत्रकृमि का अधिक प्रकोप होने पर जमीन के ऊपर पौधे गंभीर रूप से सुस्त और अस्वस्थ दिखाई देते हैं तथा पौधों का विकास अवरूद्ध हो जाता है।
- शुरूआत में निचली पत्तियां पीले और भूरे रंग में बदल जाती हैं और धीरे-धीरे पूरा पौधा सूख जाता है।
- संक्रमित पौधे छोटे, समय से पूर्व पीले एवं कमजोर जड़ संरचना वाले होते हैं। इन पर कम मात्रा में छोटे कंद लगते हैं।
- आलू कंद के रोपण के 55-60 दिनों बाद संक्रमित पौधे को जमीन से बाहर निकालने पर जड़ों के साथ चिपके सरसों के बीज के आकार के पीले या सफेद रंग की मादा कवचधारी सूत्रकृमि दिखाई देती हैं। ये 70 दिनों बाद भूरे कवच में परिवर्तित हो जाती हैं।
- जमीन के नीचे, संक्रमित पौधों की जड़-प्रणाली खराब विकसित होती है। इसके कारण कंद के आकार और उपज में काफी कमी आ जाती है।

दूसरे राज्यों के लिए आलू निर्यात करने पर रोक लगा दी गई थी। हाल ही में कवचधारी सूत्रकृमि की हिमाचल प्रदेश के शिमला (खदराला, उमलदवर, सारपानी, खारापानी, टूटूपानी, हंसतारी तीर, पोनिधर, देवरीघाट, खड़ा पत्थर, केंद्रीय आलू अनुसंधान केंद्र, कुफरी और फागू, रोहडू ब्लॉक, चोपाल ब्लॉक, जुब्बल ब्लॉक), सिरमौर (खेड़ाधर), मंडी (फुलाधर), चंबा (अहला), कुल्लू (छोवाई) एवं कांगड़ा जिले (राजगुंडा) में जम्मू एवं कश्मीर राज्य के रामबान (नाथ टोप), राजौरी (कांडी बुड्डाल), शोपियां (सिड्यू), जम्मू (आलू बीज फार्म, नाथा टोप एवं कांडी बुड्डाल) में और उत्तराखंड राज्य के पिथौरागढ़ (बलाती, मुंशीयारी, तिकसैन), टिहरी (रानी चौरी, घनुलटी), चमोली (रामानी), अलमोरा (पटोरिया), नैनीताल (माला रामगढ़ फार्म) की पहाड़ियों में आलू उगाने वाले क्षेत्रों से उपस्थिति मिली है। इसलिए भारत सरकार ने वर्ष 2018 में इन क्षेत्रों से आलू के बीज की आवाजाही को प्रतिबंधित कर दिया है।

उपज नुकसान

कवचधारी सूत्रकृमि के 20 अंडे/ग्राम मिट्टी में होने से ये फसल हानि का प्रमुख कारण बनते हैं। इस कृमि के कारण अकेले वैश्विक स्तर पर आलू की फसल को 30 प्रतिशत तक नुकसान होता है। भारत में कवचधारी सूत्रकृमि द्वारा कंद की उपज का नुकसान 5 से 80 प्रतिशत तक पाया गया है।

डेजोमेट (90 जी) को मिट्टी में मिलाने की प्रक्रिया

जड़ों में कवचधारी सूत्रकृमि का संक्रमण

कवचधारी सूत्रकृमि का प्रबंधन

बीजोपचार

सोडियम हाइपोक्लोराइट 2.0 प्रतिशत से कवचधारी सूत्रकृमि से संक्रमित बिना अंकुरित कंदों को उपचारित करने से कवचधारी सूत्रकृमि को गैर प्रभावित क्षेत्रों में प्रसार से रोका जा सकता है।

प्रतिरोधी किस्में

कवचधारी सूत्रकृमि प्रतिरोधी किस्में जैसे-कुफरी स्वर्णा, कुफरी नीलिमा और कुफरी सहयाद्री आदि का चयन प्रबंधन के लिए एक कारगर, किफायती और पर्यावरण हितैषी उपाय है। आलू की 'कुफरी स्वर्णा' और कुफरी सहयाद्री, किस्में कवचधारी सूत्रकृमि और झुलसा रोग के लिए संयुक्त प्रतिरोधी हैं।

फसलचक्र

आलू की तरह कुछ सोलेनेसी परिवार के पौधे जैसे-टमाटर, बैंगन आदि कवचधारी सूत्रकृमि के परपोषी पौधे हैं, इसलिए आलू के फसलचक्र में गैर सोलानेसी फसलों को व्यापक रूप से लेने से कवचधारी सूत्रकृमि की आबादी में कमी आती है।

गैर सोलेनेसी फसलें जैसे-मूली, बंदगोभी, फूलगोभी, शलजम, लहसुन, गाजर आदि को आलू के साथ तीन-चार वर्ष तक फसलचक्र में लगाने एवं हरी खाद फसल आदि के उपयोग से कवचधारी सूत्रकृमि की संख्या में 50 प्रतिशत से अधिक कमी आ जाती है तथा उपज में भी वृद्धि होती है।

कवचधारी सूत्रकृमि प्रतिरोधी आलू की किस्म कुफरी सहयाद्री

कवचधारी सूत्रकृमि

यह आलू का छोटा पर एक शक्तिशाली कीट है। यह संगरोध महत्व के कारण आज आलू के वैश्विक व्यापार के लिए एक गंभीर खतरा बन चुका है। भारत में कवचधारी सूत्रकृमि की उपस्थिति वाले क्षेत्रों में सख्त नियामक, स्वच्छता उपायों और एकीकृत कृमि प्रबंधन कार्यो को मजबूती के साथ करने से भविष्य में कवचधारी सूत्रकृमि के उन्मूलन की प्रबल संभावना है।

सहरोपण

आलू को फ्रेंच बीन्स के साथ (3 पंक्तियां आलू की तथा 2 पंक्तियां फ्रेंच बीन्स की) अथवा मूली के साथ (2 पंक्तियां आलू की तथा एक पंक्ति मूली की) के अनुपात में सहरोपण करने से कवचधारी सूत्रकृमि की संख्या में धीरे-धीरे कमी आती है।

ट्रैप क्रॉपिंग

कवचधारी सूत्रकृमि के लिए अति संवेदनशील आलू की किस्म कुफरी ज्योति को ट्रैप क्रॉप की तरह लगा कर 40-45 दिनों के अंदर फसल को नष्ट करने से सूत्रकृमि का जीवनचक्र पूरा नहीं हो पाता है तथा कवचधारी सूत्रकृमि की आबादी में कमी होने लगती है।

जैविक नियंत्रण

जैविक नियंत्रण प्रतिनिधियों जैसे-*स्यूडोमोनास फ्लूयोरोसेनस* या *पैसिलोमाइसीस लीलासीनस* को 10 कि.ग्रा./हैक्टर प्रयोग करने पर 8 से 10 प्रतिशत तक कवचधारी सूत्रकृमि की आबादी में कमी आती है। ट्राइकोडर्मा विरडी (5 कि.ग्रा./हैक्टर) को नीम की खली (5 टन/हैक्टर) के साथ मिश्रित कर कवचधारी सूत्रकृमि संक्रमित क्षेत्र में उपयोग करने से कृमि की संख्या में कमी आती है।

कृमिनाशक

कृमिनाशक कार्बोफ्यूरॉन 3 जी/65 कि.ग्रा./हैक्टर को पादप रोपण के समय मिट्टी में मिलाने से कृमि की आबादी में कमी आती है। धुआंरी कीटनाशक, डेजोमेट (90 जी) 300-400 कि.ग्रा./हैक्टर, कवचधारी सूत्रकृमि की आबादी को नीचे लाने में प्रभावी पाया गया है। डेजोमेट को डालने से पहले मिट्टी को पानी डालकर नर्म बनाना जरूरी होता है। डेजोमेट को मिट्टी में मिलाकर पॉलीथीन शीट से एक सप्ताह तक ढककर रखने की आवश्यकता होती है ताकि धुआंरी कीटनाशक की गैस, मिट्टी में उपस्थित सूत्रकृमि को नष्ट कर दे। इसके बाद पॉलीथीन शीट को निकालकर एक सप्ताह तक खुला छोड़ने से जितनी भी डेजोमेट की गैस मिट्टी में होती है, वह वायु में मिल जाती है। मिट्टी का तापमान 12^0 सेल्सियस से नीचे है तो डेजोमेट को मिट्टी में मिलाने के बाद 3 सप्ताह तक पॉलीथीन से ढककर रखकर 2 सप्ताह खुला छोड़ने से आलू के बीज की रोपाई करने से आलू के अंकुरण पर विपरीत प्रभाव नहीं होता है। कृमिनाशक का दोहरा उपयोग महंगा है, लेकिन यह कृमि की संख्या को कम करने में सहायक है।

समेकित प्रबंधन

उपरोक्त प्रबंधन का एकीकरण करके आलू की फसल में पुटी कृमि की आबादी में कमी लायी जा सकती है।

आलू के नए प्रसंस्करित उत्पाद

अरविन्द जायसवाल*, **ब्रजेश सिंह****, **योगेश गुप्ता***, **पिंकी रायगोंड**** और **स्वरूप कुमार चक्रबर्ती****

वैश्विक आलू कॉन्क्लेव 2020

भारत, आलू का एक मुख्य उत्पादक देश है और उत्पादन में विश्व में चीन के बाद इसका दूसरा स्थान है। पोषण की दृष्टि से आलू एक बहुत ही महत्वपूर्ण फसल है। यही कारण है कि आज भी आलू किसी न किसी रूप में हमारे प्रतिदिन के भोजन का अहम् हिस्सा है। देश में आलू के बढ़ते उत्पादन के फलस्वरूप अब उत्पादनोत्तर कई प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं, जिनका निवारण अत्यंत आवश्यक है। इन समस्याओं में उत्पादन के बाद होने वाले नुकसान एवं ग्लट की स्थितियों का खासतौर पर उल्लेख किया जा सकता है। इस परिदृश्य में हमारे लिए आलू प्रसंस्करण के क्षेत्र में बढ़ना एक लाभकारी विकल्प है। भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला पिछले कुछ वर्षों से इन चुनौतियों के समाधान पर कार्य कर रहा है। इस दिशा में संस्थान ने आलू से तैयार किए जाने वाले कुछ नवीन मूल्यवर्धित उत्पादों की प्रौद्योगिकियां भी विकसित की हैं। इनकी विशेषताओं एवं विपणन की संभावनाओं के बारे में इस लेख में विस्तारपूर्वक चर्चा की गयी है।

पिछले लगभग 70 वर्षों के दौरान भारत में आलू उत्पादन के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति हुई है। देश में आलू का उत्पादन वर्ष 1949-50 के 15.4 लाख टन से बढ़कर वर्तमान में लगभग 480 लाख टन हो गया है। यह उपलब्धि देश में हुए आलू अनुसंधान कार्यों तथा किसानों द्वारा उन्नत तकनीकों को अपनाने से संभव हो सकी है। भारतीय परिस्थितियों में आलू की फसल का अंगीकरण तथा भारतीय व्यंजनों में आलू का समावेश देश के कृषि इतिहास में एक अभूतपूर्व घटना है। इस कार्य में भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला द्वारा विकसित आलू उत्पादन एवं प्रसंस्करण की नयी तकनीकों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। आलू एक जल्दी खराब होने वाली फसल है। इस दृष्टि से आलू का प्रसंस्करण अर्थात नवीन मूल्यवर्धित आलू उत्पाद तैयार करना एक महत्वपूर्ण विकल्प सिद्ध हुआ है। अभी तक बाजार में आलू के मुख्य उत्पाद जैसे सुखाये/तले हुए चिप्स, फ्रेंच फ्राइज, भुजिया, डिब्बाबंद आलू, टिक्की, पकौड़ा आदि ही थे। देश में लागू हुए आर्थिक सुधारों एवं सामान्य जनमानस में नए स्वास्थ्यवर्धक उत्पादों के प्रति उत्पन्न जागरूकता के कारण प्रसंस्करण उद्योग के क्षेत्र में उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज की गयी है। वर्तमान में भारत में लगभग 68 प्रतिशत ताजा आलू की खपत है, जबकि 8.5 प्रतिशत आलू उपज का उपयोग बीज के रूप में तथा 7.5 प्रतिशत प्रसंस्करण प्रयोजनों के लिए किया जाता है। शेष लगभग 16 प्रतिशत आलू विभिन्न कारणों से अपशिष्ट के रूप में खराब हो जाता है। इनमें छोटे आकार, गलना और संपूर्ण आलू आपूर्ति शृंखला के दौरान आलू बर्बादी इत्यादि शामिल हैं। मौजूदा परिस्थितियों में आलू को विभिन्न प्रसंस्करित आलू उत्पादों में परिवर्तित करना एक व्यवहार्य विकल्प है। इससे आलू को भंडारित कर सकने की अवधि का विस्तार करने, बहुतायत के दौरान बर्बादी को बचाने एवं भंडारण की समस्या का समाधान करने में मदद मिल सकती है।

ग्लूटेनमुक्त खाद्य बाजार और आलू उत्पाद

वर्तमान समय में खाद्य एलर्जी और खाद्य असहिष्णुता सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए बढ़ती चिंता का विषय है। इसके कारण ग्लूटेनमुक्त खाद्य पदार्थों की मांग बहुत तेजी

आलू क्यूब्स

*भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, जालंधर (पंजाब); **भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला (हिमाचल प्रदेश)

से बढ़ी है। ग्लूटेनमुक्त खाद्य उत्पाद बाजार के लिए लक्षित समूह में सिलियक रोग या ग्लूटेन संवेदनशीलता से पीड़ित लोगों के साथ ही ऐसे लोग भी शामिल हैं, जो कि स्वास्थ्य के प्रति बहुत सजग हैं। सिलियक पीड़ित व्यक्तियों को आजीवन ग्लूटेनमुक्त आहार की आवश्यकता होती है। ऐसे लोगों के शरीर में ग्लूटेनयुक्त उत्पादों के सेवन से एक प्रतिकूल प्रतिक्रिया प्रारंभ हो जाती है, जो कि उनकी आंतों की कोशिकाओं के नुकसान का कारण बनती है। इस समस्या का एकमात्र निदान ग्लूटेनमुक्त आहार है। पिछले कुछ वर्षों में खाद्य बाजारों में ग्लूटेनमुक्त खाद्य उत्पादों की संख्या में भारी वृद्धि देखी गयी है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा संचालित कृषि-व्यवसाय प्रबंधन संस्थान (आईएबीएम) की एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत में 2016 में कुल 7.55 किलो टन ग्लूटेनमुक्त खाद्य पदार्थों का उत्पादन हुआ, जबकि ग्लूटेनमुक्त उत्पादों की मांग 2,347 किलो टन थी।

विशेषज्ञों की रिपोर्ट के अनुसार देश में ग्लूटेनमुक्त उत्पादों की अनुमानित बाजार हिस्सेदारी वैश्विक उत्पादन का केवल 0.5-2.0 प्रतिशत ही है। अब यह परिदृश्य तेजी से बदल रहा है, लोगों में ग्लूटेनमुक्त खाद्य उत्पादों के प्रति जागरूकता आ रही है। यही नहीं भारत के कुछ बड़े शहरों में ग्लूटेनमुक्त खाद्य उत्पादों वाले जलपानगृह भी खुल गए हैं। आने वाले वर्षों में संभावना है कि ग्लूटेनमुक्त खाद्य पदार्थों की भारतीय बाजार में हिस्सेदारी में काफी बढ़ोतरी होगी और निकट भविष्य में यह 8.7 प्रतिशत तक पहुंच सकती है। अभी तक हमारे देश में ग्लूटेनमुक्त खाद्य उत्पादों के रूप में बाजार में मुख्य रूप से आटा और मल्टीग्रेन आटा ही उपलब्ध हैं। इस परिदृश्य में आलू के ग्लूटेनमुक्त होने का लाभ लिया जा सकता है। हाल ही में भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला ने आलू से कुकीज, हलवा मिश्रण, दलिया, सूजी एवं बर्फी बनाने की तकनीकी विकसित की है, जो कि ग्लूटेनरहित और उपवास में भी खाने के अनुकूल है।

आलू पेठा

आलू, अन्य फसलों की तुलना में काफी कम समय में प्रति इकाई क्षेत्रफल की दर से अत्यधिक पोषक खाद्य पदार्थ देने में सक्षम है। भारत में कुल आलू उत्पादन का 90 प्रतिशत हिस्सा फरवरी-मार्च में ही बाजार में आ जाता है। इसकी अधिक आमद से बाजार में ग्लट या भरमार के कारण कीमतों में काफी गिरावट आ जाती है। किसानों को उनकी उपज का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है। ऐसी परिस्थितियों में आलू के परंपरागत उत्पादों के अतिरिक्त अन्य मूल्यवर्धित उत्पाद जैसे पेठा आदि बनाया जा सकता है। इसकी बाजार में पहले से ही काफी मांग एवं स्वीकार्यता है। पेठा कई प्रकार के रूप, रंग, आकार, एवं सुगंधों में बाजार में बहुतायत में पूरे वर्ष बिकने वाली उत्तर भारत की एक लोकप्रिय मिठाई है। हाल ही में भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला ने आलू से पेठा बनाने की प्रौद्योगिकी विकसित की है। आलू का पेठा बनाने के लिए शीत भंडारित आलू का भी उपयोग किया जा सकता है। इसके साथ ही इस प्रौद्योगिकी के लिए प्रसंस्करण किस्म के आलू के उपयोग की अनिवार्यता भी नहीं है। आलू से पेठे के उत्पादन द्वारा बाजार में आलू की उपलब्ध अतिरिक्त मात्रा खप सकती है। इससे इस फसल के उचित प्रयोग से किसान भाइयों के साथ-साथ उपभोक्ताओं को भी फायदा होगा।

विकसित नवीन मूल्यवर्धित आलू उत्पाद

आलू कुकीज

संस्थान द्वारा विकसित आलू आधारित कुकीज, गेहूं/ग्लूटेन/मैदा इत्यादि से पूरी तरह मुक्त हैं और उनके संघटन में भी नवीनता है। इस कारण ये कुकीज बाजार में उपलब्ध अन्य कुकीज के बीच अपना एक अलग महत्व रखते हैं। इन कुकीज को तैयार करने के लिए किसी भी आकार अथवा माप के आलू का उपयोग किया जा सकता है। इन कुकीज को बनाने में उपयोग किए जाने वाले आलू में शर्करा की मात्रा एवं आलू की भंडारण अवधि का कुकीज

आलू दलिया

फ्लेक्स

आलू से बने फ्लेक्स को ठंडे पानी या गर्म दूध में मिलाकर खाया जा सकता है। इसके अलावा फ्लेक्स का उपयोग आटा गूंथकर परांठा और कचौरी बनाने के अतिरिक्त पास्ता, भुजिया, चिप्स, पापड़ आदि बनाने में किया जा सकता है। इसका इस्तेमाल चॉकलेट मिल्क को गाढ़ा करने के लिए भी किया जा सकता है। इसे घरेलू और व्यावसायिक स्तर पर तैयार किया जा सकता है। फ्लेक्स बनाने के लिए किसी भी आकार के आलू का इस्तेमाल किया जा सकता है।

की गुणवत्ता पर कोई हानिकारक प्रभाव नहीं होता है। बिना छिले आलू से बने होने के कारण ये आलू कुकीज फाइबर के भी अच्छे स्रोत हैं। विशिष्ट उत्पादन प्रक्रिया एवं संघटन के कारण इन कुकीज में सोडियम की मात्रा बहुत कम एवं पोटेशियम प्रचुर मात्रा में उपस्थित है। इस कुकीज उत्पादन प्रक्रिया में आलू का आटा एक प्रमुख घटक के रूप में उपयोग होता है। इसके अतिरिक्त इसमें चीनी, वसा और गैस उत्पन्न करने वाले कारकों का उपयोग भी शामिल है। इन सभी घटकों को एक निश्चित अनुपात में मिलाकर मिश्रण तैयार किया जाता है। इस मिश्रण को कुकीज का आकार देकर ओवन में सेंका/पकाया जाता है। यदि इन कुकीज को शुष्क, ठंडे एवं कम प्रकाश वाली जगह पर भंडारित किया जाये तो ये चार माह तक खाने के लिए उपयुक्त रहती हैं।

कुकीज उत्पादन के लिए उपयोग किया जाने वाला आलू का आटा बाजार से आसानी से खरीदा या अपेक्षाकृत कम लागत पर फसल की बहुतायत के दौरान बड़ी मात्रा में तैयार किया जा सकता है। इसका पूरे वर्ष अनुकूल तापमान पर भंडारण भी किया जा सकता है। आलू कुकीज बनाने की प्रक्रिया को बेकरी खाद्य पदार्थों के उत्पादन में शामिल उद्योगों द्वारा बहुत ही कम लागत में आसानी से अपनाया जा सकता है। बिस्कुट और कुकीज ऐसे बेकरी उत्पाद हैं, जो कि सभी उम्र और आयु समूह के लोगों द्वारा पसंद किए जाते हैं। वर्तमान में भारतीय बाजार में इस प्रकार की आलू से बनी कुकीज उपलब्ध नहीं हैं। इसके साथ ही ग्लूटेन की अनुपस्थिति इन कुकीज को ग्लूटेनमुक्त खाद्य पदार्थों के बाजार में भी एक महत्वपूर्ण स्थान प्रदान करती है। इसलिए आलू कुकीज उत्पादन में व्यवसाय की अपार संभावनाएं हैं। भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान ने कुल 10 प्रकार की आलू कुकीज तैयार की हैं, जो कि पूर्णतया ग्लूटेन/मैदारहित हैं। इसके साथ ही अनाज एवं नमकरहित होने के कारण कुछ प्रकार की कुकीज को व्रत में भी खाया जा सकता है।

आलू बर्फी

बर्फी, त्योहारों के मौसम और समारोहों के दौरान सबसे अधिक पसंद की जाने वाली मिठाई है। पारंपरिक तरीके से बर्फी कंडेंस्ड दुग्ध, मेवे, शुगर और फ्लेवर से तैयार की जाती है। भारतीय बाजार में कई प्रकार की बर्फी उपलब्ध हैं जिनमें दुग्ध, लौकी, गाजर, फल, बेसन इत्यादि से बनने वाली बर्फी शामिल हैं। सभी दुग्ध आधारित बर्फी में लैक्टोज या दुग्ध शर्करा होती है। यह लैक्टोज असहिष्णु (ऐसी स्थिति जिसमें व्यक्ति दूध और दुग्ध आधारित उत्पादों को पचा नहीं सकता) व्यक्तियों के लिए उपयुक्त नहीं है। गाजर, लौकी, फल, बेसन इत्यादि से बनने वाली बर्फी में लैक्टोज नहीं पाया जाता है। भारत में प्रत्येक वर्ष ताजे आलू के कुल उत्पादन का लगभग 15-16 प्रतिशत विभिन्न कारणों से अपशिष्ट के रूप में नष्ट हो जाता है। कटाई के बाद होने वाले इस नुकसान के प्रतिशत को कम करने के लिए इसका उपयोग विभिन्न प्रकार की मिठाइयां तैयार करने के लिए किया जा सकता है। संस्थान ने ताजे आलू का प्रयोग कर कम वसा वाली लैक्टोजरहित आलू की बर्फी तैयार करने की प्रौद्योगिकी विकसित की है। इस बर्फी के उत्पादन के लिए किसी भी आकार, माप और रंग के आलू का प्रयोग किया जा सकता है। आलू बर्फी को 20^0-25^0 सेल्सियस तापमान पर 20 दिनों तक भंडारित किया जा सकता है।

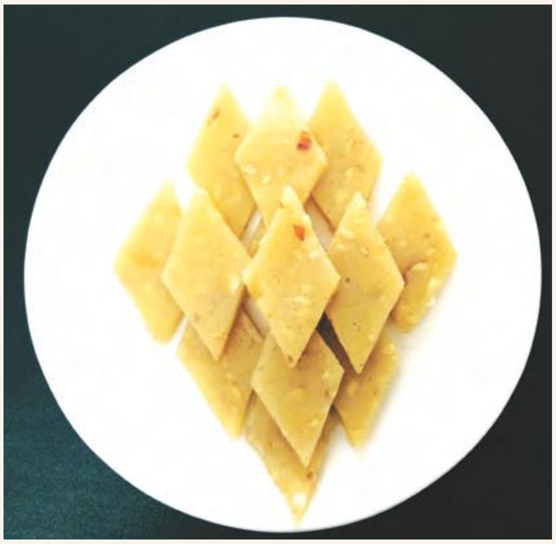

आलू दलिया एवं सूजी

समूचे भारत में दलिया का इस्तेमाल नाश्ते के रूप में या जब हल्के सुपाच्य भोजन की जरूरत हो तो, पौष्टिक पकवान बनाने के लिए किया जाता है। स्वाद के अनुसार इसे मीठा या नमकीन बनाया जा सकता है। भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान ने आलू से दलिया एवं सूजी बनाने की प्रौद्योगिकी विकसित की है। आलू दलिया और सूजी को आलू के सम्पूर्ण भाग का उपयोग कर बनाये जाने के कारण इसमें रेशे प्रचुर मात्रा (11 प्रतिशत) में उपस्थित होते हैं। ये हमारे पाचन तंत्र के लिए लाभदायक हैं। इसके अलावा इन उत्पादों में लगभग 7 से 7.5 प्रतिशत प्रोटीन पायी जाती है। आलू में पायी जाने वाली प्रोटीन की गुणवत्ता का स्तर, अंडे में पायी जाने वाली प्रोटीन के लगभग समतुल्य होता है। इनमें अमीनो अम्लों (प्रोटीन के घटक) का एक बहुत ही संतुलित संघटन होता है। यही नहीं हमारे स्वास्थ्य के लिए आवश्यक अमीनो अम्ल भी इसमें अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। बाजार में उपलब्ध अन्य दलिया के समान आलू दलिया को दूध या पानी में पकाया जा सकता है। इसी तरह आलू सूजी का उपयोग हलवा, उपमा, इडली आदि बनाने के लिए किया जा सकता है। इसके अलावा

आलू प्रसंस्करण का वर्तमान परिदृश्य

आलू प्रसंस्करण की शुरूआत लगभग 2000 वर्ष पूर्व पेरु और बोलिविया की पहाड़ियों से हुई। यहां आलू को सुखाकर आटा बनाया जाता था। भारत में व्यावसायिक तौर पर आलू प्रसंस्करण की पहल वर्ष 1911 में कर्नल रेनिक ने की और हिमाचल प्रदेश के नारकंडा के पास आलू का आटा तैयार करने की चक्की लगाई। वर्तमान में आलू की कुल उपज का लगभग 7.5 प्रतिशत ही प्रसंस्करण के लिए उपयोग किया जाता है। भारत में आलू प्रसंस्करण उद्योग मुख्यत: चार क्षेत्रों में बंटा है-आलू चिप्स, फ्रोजन उत्पाद, आलू के फ्लेक्स/पाउडर और अन्य प्रसंस्करित उत्पाद जैसे निर्जलित चिप्स, आलू भुजिया, समोसा और टिक्की। आलू चिप्स और फ्रेंच फ्राइज अभी भी सबसे आम और लोकप्रिय प्रसंस्करित आलू उत्पाद हैं। पिछले कुछ वर्षों में आलू के फ्लेक्स/पाउडर के उत्पादन में भी शानदार वृद्धि देखी जा रही है। इन प्रसंस्करण उद्योगों के बाद भी आलू की खुदाई के बाद होने वाला नुकसान बहुत ज्यादा (लगभग 16 प्रतिशत) है। खुदाई के बाद होने वाले हानि को देखते हुए अभी भी आलू से नवीन मूल्यवर्धित उत्पादों के उत्पादन द्वारा प्रसंस्करण क्षेत्र में वृद्धि की अपार संभावनाएं हैं।

आलू दलिया एवं सूजी सिलियक रोग या गेहूं की एलर्जी से पीड़ित व्यक्तियों के लिए एक ग्लूटेनरहित आहार विकल्प हैं। इन उत्पादों को बनाने के लिए मध्यम से उच्च शुष्क पदार्थ वाली आलू की किस्मों का उपयोग किया जा सकता है। उत्पादन प्रक्रिया के दौरान दिया जाने वाला पूर्व उपचार इन उत्पादों के प्राकृतिक पौष्टिक गुणों को बनाए रखता है। दलिया और सूजी बनाने के लिए सभी आकार एवं माप के आलू का इस्तेमाल किया जा सकता है। आलू दलिया और सूजी को यदि ठंडी एवं सूखी जगह पर रखा जाए तो इन्हें 8-9 महीने तक भंडारित किया जा सकता है।

आलू को सुखाकर बनाए गए विभिन्न उत्पाद

निर्जलीकरण द्वारा खाद्य पदार्थों का संरक्षण एक सस्ता, पुराना एवं असरदार तरीका है। इस प्रक्रिया में भोज्य पदार्थों को सुखाकर नमी की मात्रा को बहुत कम कर दिया जाता है। इससे खाद्य पदार्थों में होने वाली आंतरिक जैव रासायनिक प्रतिक्रिया लगभग समाप्त हो जाती है। इसके साथ ही सूक्ष्मजीवों के संक्रमण की आशंका भी बहुत कम हो जाती है। निर्जलीकरण, आलू की अधिक पैदावार से होने वाली समस्या से निपटने का एक बहुत ही अच्छा समाधान है। निर्जलीकृत उत्पाद तैयार करने के लिए आलू को परंपरागत तरीकों से या तो धूप में अथवा कृत्रिम रूप से अधिक तापमान में सुखाया जा सकता है। निर्जलीकरण के ये सभी तरीके कुछ हद तक आलू की गुणवत्ता और स्वाद को भी प्रभावित करते हैं। भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला ने इस दिशा में निर्जलीकरण की एक ऐसी तकनीक विकसित की है, जिसके द्वारा तैयार आलू के उत्पादों की गुणवत्ता और स्वाद बरकरार रहते हैं।

आलू क्यूब और श्रेड

आलू क्यूब और श्रेड आलू के ऐसे उत्पाद हैं, जिनको ताजे आलू के अभाव में पानी में भिगोकर ताजे आलू की तरह इस्तेमाल किया जा सकता है। सामान्य निर्जलीकरण प्रक्रिया आलू क्यूब और श्रेड की गुणवत्ता तथा स्वाद को नकारात्मक रूप से प्रभावित करती है। हाल ही में संस्थान ने एक ऐसी तकनीक विकसित की है, जिसके द्वारा तैयार सूखे आलू में अच्छी गुणवत्ता और पानी में भीगने के बाद भी प्राकृतिक रंग एवं कुदरती स्वाद बरकरार रहता है। परंपरागत तरीकों से धूप या कृत्रिम तापमान में सुखाने से आलू की कोशिकाओं के स्तर पर बदलावों से गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। सुखाने की प्रक्रिया के दौरान अधिक एवं अनियमित तापमान उत्पादों के प्राकृतिक रंग एवं कुदरती स्वाद को भी समाप्त कर देता है। ऐसे उत्पाद पानी में भिगोने पर भी अच्छी तरह से पुनः पानी नहीं सोख पाते। इस प्रक्रिया में आलू को छीलकर इच्छित आकार के क्यूब या श्रेड्स में काटकर एक विशेष तकनीक से सुखाया जाता है ताकि आलू में नमी का स्तर घटकर 5-6 प्रतिशत तक आ जाए। इस तकनीक से आलू के स्वाद, रंग एवं आंतरिक सरंचना में कोई भी परिवर्तन नहीं होता है। इन्हें इस्तेमाल करना हो तो कुछ समय के लिए पानी में भिगोकर रख देते हैं और दोबारा ताजे आलू की तरह ये प्रयोग किए जा सकते हैं।

आलू श्रेड

इस तकनीक द्वारा सूखे आलू में आवश्यक पोषक तत्वों जैसे विटामिन 'सी' एवं खनिज तत्व (जिंक, लोहा) की मात्रा भी बढ़ायी जा सकती है। सूखे उत्पाद सामान्य तापमान एवं नमी (14^0-38^0 सेल्सियस, 40-90 प्रतिशत सापेक्षिक आर्द्रता) पर उपयुक्त बैग में पैक करके 6-8 महीने से भी अधिक समय तक भंडारित किए जा सकते हैं। सूखे खाद्य उत्पाद आकार के अनुसार अलग-अलग समय के लिए पानी में भिगोकर स्वाद के अनुसार रसदार सब्जियों, सूप या स्नैक्स को तैयार करने के लिए

तुरंत पकाने के लिए तैयार आलू हलवा मिश्रण

उत्तर भारत के कई क्षेत्रों में उपवास के दौरान आलू का हलवा अत्यधिक पसंद किया जाता है। पारंपरिक रूप से आलू का हलवा तैयार करने में दो चरण की प्रक्रिया शामिल है-आलू को उबालना/छीलना और मैश करके वसा की अच्छी मात्रा में चीनी के साथ उबले आलू को भूनना। इस पूरी प्रक्रिया में लगभग 30-40 मिनट का समय लगता है। अधिक वसा की मात्रा के कारण इस प्रकार बना आलू हलवा हृदय रोगों से पीड़ित व्यक्तियों के लिए उपयुक्त नहीं होता है। हाल ही में संस्थान ने तुरंत पकाने के लिए तैयार आलू हलवा मिश्रण विकसित किया है। विकसित हलवा मिश्रण में वसा एवं सोडियम की मात्रा बहुत कम है। इसके साथ ही यह ग्लूटेनरहित एवं प्रचुर रेशों से युक्त है तथा उपवास में खाने योग्य उत्पाद है। इसे अनुकूल भंडारण दशाओं में 6 महीने तक भंडारित किया जा सकता है। उपभोग से पहले इस हलवा मिश्रण को उबलते पानी या दूध में 10 मिनट तक पकाने की आवश्यकता होती है। आलू हलवा मिश्रण के उत्पादन में किसी भी आकार एवं रंग के आलू का इस्तेमाल किया जा सकता है। हलवा मिश्रण के उत्पादन प्रौद्योगिकी की सुगमता इस मिश्रण के उत्पादन को किसी भी स्तर पर न्यूनतम निवेश के साथ अनुकूलनीय बनाती है। ग्लूटेनरहित होने के कारण आलू हलवा मिश्रण, सिलियक एवं गेहूं एलर्जी से पीड़ित व्यक्तियों के लिए भी एक नया एवं बेहतर खाद्य विकल्प है।

आलू पापड़

पापड़ बनाने के लिए आलू को उबालकर एवं छीलकर आटे की तरह गूंथा जाता है। इसके बाद इसकी छोटी-छोटी पेड़ियों को पापड़ की तरह पतला बेलकर सुखाया जाता है। अच्छे किस्म के पापड़ बनाने के लिए गूंथे हुए आटे एवं श्लेषीकृत साबुदाना के पेस्ट का 1:1 अनुपात में प्रयोग किया जाता है।

उपयोग किए जा सकते हैं। इसमें प्रोटीन, विटामिन-सी, विटामिन बी-3, पोटेशियम, मैग्नीशियम, कैल्शियम, फॉस्फोरस, जिंक, कॉपर, कार्बोहाइड्रेट एवं फाइबर अच्छी मात्रा में पाये जाते हैं। इसी प्रकार इस तकनीक द्वारा बने श्रेड का इस्तेमाल पोषक नूडल्स के विकल्प के रूप में किया जा सकता है। श्रेड का उपयोग लच्छे, आटा, परांठा, पीठी, खीर इत्यादि बनाने में भी संभव है।

स्टिक्स, लच्छे, पापड़ एवं स्टार्च

आलू का लच्छा मूल रूप से स्नैक्स के रूप में उपयोग किया जाता है। आवश्यकतानुसार इन लच्छों को तेल में तलकर नमकीन बनाने के उपयोग में लाया जाता है। आलू से तैयार इन स्टिक्स और लच्छों की नमीरोधी पैकिंग कर इन्हें कई महीनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। आलू से बनी स्टिक्स और लच्छों को धूप में भी सुखाया जा सकता है, परन्तु धूप में सुखाने से इनकी गुणवत्ता एवं रंग प्रभावित होते हैं।

विश्व में आलू की कुल पैदावार का लगभग 3 प्रतिशत हिस्सा स्टार्च बनाने के काम में लाया जाता है। स्टार्च उत्पादन के मामले में नीदरलैंड का विश्व में पहला स्थान है। आलू से तैयार स्टार्च में पानी अवशोषित करने की क्षमता अधिक होती है तथा इसमें चिपचिपाहट भी अधिक होती है। स्टार्च के इन्हीं गुणों के कारण इसे अन्य अनाजों से बनने वाले स्टार्च से श्रेष्ठ माना जाता है। इसका ज्यादातर इस्तेमाल कागज, खाद्य और औषधि निर्माण में किया जाता है। विकसित देशों में आलू स्टार्च का इस्तेमाल बेकरी और मिष्ठान उद्योग में भी बड़े पैमाने पर किया जाता है। इसके अलावा तरी को गाढ़ा करने और फटाफट तैयार होने वाले भोज्य पदार्थों को बनाने के लिए भी आलू स्टार्च का उपयोग किया जाता है। स्टार्च बनाने के लिए छोटे-बड़े, कटे-फटे, विकृत, चोटिल अथवा बेकार सभी प्रकार के आलू का इस्तेमाल किया जा सकता है। स्टार्च तैयार करने के लिए अधिक शुष्क पदार्थ वाली किस्में ज्यादा उपयुक्त होती हैं। ■

वैश्विक आलू कॉन्क्लेव 2020

आलू से बिजली पैदा करने की तैयारी

दुनियाभर में बिजली पैदा करने के लिए नए विकल्पों की तलाश की जा रही है। कोयले और पानी से चलने वाले पॉवर ग्रिडों में बिजली पैदा करने से पर्यावरण को नुकसान पहुंच रहा है। ऐसे में कई शोधकर्ता आलू से बिजली पैदा करने के मिशन में लगे हुए हैं। एक साइंस जर्नल में प्रकाशित लेख के अनुसार क्या बल्ब जलाने और घरों को रोशन करने के लिए बिजली ग्रिड की जगह आलू का इस्तेमाल संभव है? शोधकर्ता राबिनोविच और उनके सहयोगी पिछले कुछ वर्षों से लोगों को यही करने के लिए प्रोत्साहित कर रहे हैं। यह सस्ती धातु की प्लेट्स, तारों और एलईडी बल्ब को जोड़कर किया जाता है। उनका दावा है कि यह तकनीक दुनियाभर के छोटे कस्बों और गांवों को रोशन कर सकती है।

येरुशलम की हिब्रू यूनिवर्सिटी के राबिनोविच का दावा है, 'एक आलू चालीस दिनों तक एलईडी बल्ब को जला सकता है।' राबिनोविच इसके लिए कोई नया सिद्धांत नहीं दे रहे हैं। यह सिद्धांत हाईस्कूल की किताबों में पढ़ाया जाता है और बैटरी इसी पर काम करती है। इसके लिए जरूरत होती है दो धातुओं की-पहला एनोड, जो निगेटिव इलैक्ट्रोड है, जैसे कि जिंक और दूसरा कैथोड जो पॉजीटिव इलेक्ट्रोड है, जैसे कॉपर यानी तांबा।

आलू के भीतर मौजूद एसिड, जिंक और तांबे के साथ रासायनिक क्रिया करता है और जब इलैक्ट्रॉन एक पदार्थ से दूसरे पदार्थ की तरफ जाते हैं तो ऊर्जा पैदा होती है। इसकी खोज वर्ष 1780 में लुइगी गेल्वनी ने की थी, जब उन्होंने मेंढक की मांसपेशियों को झटके से खींचने के लिए दो धातुओं को मेंढक के पैरों में बांधा था। इसी प्रभाव को पाने के लिए इन दो इलेक्ट्रोड्स के बीच कई पदार्थ रख सकते हैं।

एलेक्जेंडर वोल्टा ने नमक के पानी में भीगे हुए कागज का इस्तेमाल किया था। अन्य शोधों में धातु की दो प्लेट्स और मिट्टी के एक ढेर या पानी की बाल्टी से 'अर्थ बैटरियां' बनाई गई थीं। वर्ष 2010 में राबिनोविच ने कैलिफोर्निया यूनिवर्सिटी के एलेक्स गोल्डबर्ग और बोरिस रुबिंस्की के साथ इस दिशा में एक और कोशिश करने की ठानी। गोल्डबर्ग बताते हैं, 'हमने 20 अलग-अलग तरह के आलू देखे और उनकी आंतरिक प्रतिरोध की जांच की। इससे हमें यह समझने में मदद मिली कि गरम होने से कितनी ऊर्जा नष्ट हुई।'

इस प्रकार आलू को आठ मिनट उबालने से आलू के अंदर कार्बनिक ऊतक टूटने लगे, प्रतिरोध कम हुआ और इलैक्ट्रॉन्स ज्यादा मूवमेंट करने लगे, इससे अधिक ऊर्जा बनी।

आलू को चार-पांच टुकड़ों में काटकर इन्हें तांबे और जिंक की प्लेट के बीच रखा गया। इससे ऊर्जा 10 गुना बढ़ गई यानी बिजली बनाने की लागत में कमी आई।

राबिनोविच कहते हैं, ''इसकी वोल्टेज कम है, लेकिन ऐसी बैटरी बनाई जा सकती है, जो मोबाइल या लैपटॉप को चार्ज कर सके।'

एक आलू उबालने से पैदा हुई बिजली की लागत 9 डॉलर प्रति किलोवाट घंटा आई, जो डी-सेल बैटरी से लगभग 50 गुना सस्ती थी।

विकासशील देशों में जहां केरोसिन (मिट्टी का तेल) का इस्तेमाल अधिक होता है, वहां भी यह छह गुना सस्ती थी।

दुनिया में करोड़ों लोग बिजली से वंचित हैं और एक आलू उनका घर रोशन कर सकता है।

मामला जटिल?

शायद यह इतनी सीधी बात नहीं है, मामला कुछ जटिल है। पहली वजह है। यह मुद्दा 'बिजली के लिए खाद्यान्न' से जुड़ा है। संयुक्त राष्ट्र के कृषि और खाद्य संगठन का कहना है कि गन्ने या जैव ईंधन से ऊर्जा बनाने से बचना चाहिए। पहली आवश्यकता इस बात को देखने की है कि क्या खाने के लिए पर्याप्त आलू हैं? केन्या जैसे देश में लोगों के लिए मक्का के बाद आलू सबसे प्रमुख आहार है। विशेषज्ञों के अनुसार भंडारण न किए जाने या अन्य वजहों से नष्ट होने वाले आलू को बचाने के लिए इसे जरूर ऊर्जा पैदा करने के काम में लगा सकते हैं। ■

आलू भंडारण की विभिन्न विधियां

ब्रजेश सिंह*, पिंकी रायगोंड*, अरविंद जायसवाल*, वंदना* और एन. साइलो*

वैश्विक आलू कॉन्क्लेव 2020

हमारे कृषक अपनी अथक मेहनत से हर वर्ष लगभग 500 लाख मीट्रिक टन आलू का उत्पादन करते हैं। आजादी से लेकर अब तक निरंतर हमारे देश में आलू का उत्पादन दिन-प्रतिदिन बढ़ता रहा है। इस उपलब्धि का एक बड़ा श्रेय भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला को भी जाता है, जहां हर समस्या को ध्यानपूर्वक देखा गया व इसके निदान के लिए निरंतर प्रयास किए गए। इस बढ़ते हुए आलू उत्पादन से एक विकट समस्या भी चुनौती बनकर सामने आई है और वह है फसलोत्तर संभाल अथवा आलू भंडारण की। हमें यह ज्ञात है कि आलू में लगभग 80 प्रतिशत जल होता है और ऐसी फसल को भंडारित कर रखना किसी चुनौती से कम नहीं है। संस्थान द्वारा ऐसी कई तकनीकियों का विकास किया गया है, जिनसे आलू का प्रभावी तौर पर भंडारण किया जा सके।

देश के अधिकतर भागों में (85 प्रतिशत मैदानी इलाके) आलू की खुदाई फरवरी-मार्च में होती है, जिसके बाद ग्रीष्म ऋतु आ जाती है। ऐसी परिस्थिति में आलू में अत्यधिक ह्रास होने की आशंका रहती है। अतः आलू की फसल को सामान्यतः शीत भंडारों में सुरक्षित रखा जाता है। भंडारण की समस्या व इसके निदान को विभिन्न उपयोगों के अनुसार देखा और समझा जा सकता है।

*भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला-171001 (हिमाचल प्रदेश)

बीज के लिए आलू भंडारण

मैदानी क्षेत्र

आलू बीज को एक फसल से दूसरी फसल तक बचा कर रखना अति आवश्यक होता है। यह अंतराल लगभग 7-8 माह का होता है। शीत भंडारों में बीज को भंडारित करना सबसे सुविधाजनक माना जाता है। ये शीत भंडार 2^0-4^0 सेल्सियस तापमान व 80 प्रतिशत सापेक्षिक आर्द्रता पर कार्य करते हैं। इसका फायदा यह है कि शीत भंडारित आलू में अंकुरण का जमाव लगभग न के बराबर होता है व इनमें भार का ह्रास भी न्यूनतम होता है। अतः भंडारित आलू ठोस दिखते हैं व जब बीज के लिए इनका उपयोग किया जाता है तो इनकी दैहिक अवस्था भी अनुकूल होती है। देश में कुल पैदावार का लगभग 70-80 प्रतिशत आलू शीत भंडारों में सुरक्षित रखा जा सकता है। इसके लिए किसानों को अतिरिक्त खर्च भी करना पड़ता है, जो किन्हीं परिस्थितियों में मुश्किल भी होता है।

पहाड़ी क्षेत्र

बीज योग्य आलू के भंडारण के लिए पहाड़ी क्षेत्रों में शीत भंडारों की आवश्यकता नहीं होती है। इन क्षेत्रों में सामान्यतः खुदाई

शीत भंडार में बीज आलू भंडारण

विसरित प्रकाश में बीज आलू का भंडारण

देसी भंडारण विधि

किसान लंबे अरसे से देसी विधियों द्वारा आलू का भंडारण करते रहे हैं। इसमें एक समस्या यह रही है कि आलू में होने वाला ह्रास 10-40 प्रतिशत तक बढ़ जाता है, जो लाभ किसानों को अपेक्षित होता है वह लगभग नगण्य हो जाता है। संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा इन देसी विधियों में कुछ बदलाव लाए गए ताकि इससे आलू में होने वाले ह्रास को 10 प्रतिशत व उससे कम स्तर पर लाया जा सका। इन सुधारों में छप्पर लगाना, आलू को ढेर व गड्ढों में पुआल से ढककर रखना, उनमें छिद्रयुक्त पीवीसी पाइप लगाना, उनको किसी अंकुरणरोधी रसायन जैसे क्लोरप्रोफाम से उपचारित करना इत्यादि शामिल हैं। इन सुधारों को अपनाते हुए कृषक बंधु आलू का 3-4 माह तक कुशलतापूर्वक भंडारण कर सकते हैं। इस प्रकार आलू के दाम मंडी में जब अधिक हों तो उन्हें वहां बेचकर अधिक लाभ की प्राप्ति कर सकते हैं।

ढेर में आलू का उन्नत भंडारण

के बाद शीतकाल का आरंभ हो जाता है व आलू को विसरित प्रकाश में सुरक्षित रखा जा सकता है। शीतकाल में आलू के अंकुरण की बढ़वार नहीं हो पाती है और ग्रीष्मकाल के आरंभ में अंकुरण बढ़ने लगते हैं। इसके बाद इन आलू की बुआई कर दी जाती है। इस प्रकार बीज योग्य आलू को कुशलतापूर्वक निम्न दो विधियों द्वारा भंडारित किया जा सकता है:

खाने व प्रसंस्करण योग्य आलू का भंडारण

वैसे तो अधिकांश क्षेत्रों में खाने व प्रसंस्करण योग्य आलू को बीज आलू की भांति ही शीत भंडारों में 2^0-4^0 सेल्सियस तापमान पर भंडारित किया जाता रहा है, पर इससे एक बड़ी समस्या उत्पन्न हुई है। शीत भंडारों में इतने कम तापमान पर रखने से आलू में अवकारक शर्करा का अत्यधिक जमाव हो जाता है। इससे आलू स्वाद में मीठे लगते हैं व अधिकतर उपभोक्ताओं द्वारा इन्हें पसंद नहीं किया जाता है। इसी प्रकार प्रसंस्करण योग्य आलू में यदि शर्करा का अधिक जमाव हो जाता है तो उनसे बनने वाले उत्पाद भूरे अथवा काले रंग के हो जाते हैं। इसके लिए संस्थान ने दो प्रकार की तकनीकियों का विकास किया है, जो निम्न हैं:

शीत भंडार की आधुनिक विधि

संस्थान ने एक नई तकनीकी का विकास किया है, जिसमें आलू को बढ़े हुए तापमान (अर्थात 10^0-12^0 सेल्सियस) पर भंडारित किया जा सकता है। परीक्षणों से यह ज्ञात हुआ है कि इस बढ़े हुए तापमान पर अवकारक शर्करा का जमाव न्यूनतम होता है। इस तापमान पर अंकुरण होना जल्द ही आरंभ हो जाता है। आलू को किसी अंकुररोधी रसायन जैसे क्लोरप्रोफाम अथवा सीआईपीसी द्वारा उपचारित करना पड़ता है। यह तकनीकी हमारे देश में लगभग 15 वर्षों से ही प्रचलित हुई है। इसका तेजी से विस्तार हो रहा है व वर्तमान में कुल शीत भंडारों (लगभग 7000) में से 1000 शीत भंडार इस तकनीकी द्वारा आलू को भंडारित कर रहे हैं। शीत भंडारों में जब आलू 10^0-12^0 सेल्सियस तापमान पर भंडारित किया जाता है तो उन्हें 6 माह के समय में दो बार रसायन द्वारा उपचारित करना पड़ता है। यह रसायन एक मशीन द्वारा धुंध (फॉग) के रूप में डाला जाता है। परीक्षणों द्वारा ऐसे आलू की विद्यायन गुणवत्ता भी मापी गई है, जो कुछ महीनों तक अनुकूल पाई गई है। इस तकनीकी द्वारा अब बाजार में खाने योग्य कम मीठे आलू भी उपलब्ध कराए जा रहे हैं। उपभोक्ता इसके लिए अधिक दाम देने से भी नहीं हिचकिचाते हैं। अच्छी किस्मों को 5-6 माह तक इसी विधि द्वारा भंडारित करके प्रसंस्करण उद्योग इन आलू को ही विभिन्न उत्पाद बनाने के लिए उपयोग में लाते हैं।

अधिक तापमान पर रखे आलू से बने चिप्स

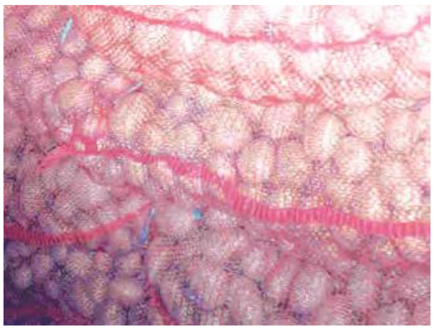

शीत भंडारों में सीआईपीसी की फोगिंग व उपचारित आलू का भंडारण

कृषक अपने अथक प्रयासों द्वारा आलू की उपज पैदा करता है। इससे समुचित लाभ मिलने पर ही उसका व हमारे कृषक प्रधान देश का समग्र विकास हो सकता है। उपज के उपरांत फसल को संभालकर रखने के लिए यदि किसान इन उपरोक्त विधियों से आलू को भंडारित करते हैं तो उन्हें अवश्यंभावी उचित लाभ प्राप्त होगा। ■

आलू खेती में उद्यम विकास की संभावनाएं

सुखविंदर सिंह*, **ब्रजेश नारे*** और **अरविन्द जायसवाल***

पोषण की दृष्टि से भी आलू एक बहुत ही महत्वपूर्ण फसल है। इस कारण आज भी आलू किसी न किसी रूप में हमारे प्रतिदिन के भोजन में अपना स्थान रखता है। आलू के साथ जुड़कर कई क्षेत्रों में व्यवसाय की अपार संभावनाएं भी हैं। इनमें मुख्य रूप से बीज आलू उत्पादन, खाद्याहार में आलू पर आधारित व्यवसाय, प्रोसेसिंग के लिए आलू एवं आलू की खेती से संबंधित कृषि यंत्रों का निर्माण इत्यादि शामिल हैं। इस लेख में आलू आधारित व्यवसाय की संभावनाओं के संबंध में विस्तारपूर्वक चर्चा की गयी है।

वैश्विक आलू कॉन्क्लेव 2020

वर्तमान में आलू के कुल उत्पादन का एक भाग प्रतिदिन के खाने के लिए, कुछ हिस्सा अगले वर्ष बीज के लिए एवं शेष भाग प्रसंस्करण के लिए उपयोग में लाया जाता है। आलू की खेती में व्यवसाय की संभावनाओं को मुख्यत: चार क्षेत्रों में वर्गीकृत किया जा सकता है, जो कि निम्नवत हैं:

- बीज आलू उत्पादन
- खाद्याहार के लिए आलू उत्पादन
- आलू प्रसंस्करण
- आलू उत्पादन के कृषि यंत्रों का व्यापार

बीज आलू उत्पादन

आलू उत्पादन की कुल लागत का 40 से 50 प्रतिशत भाग केवल बीज पर व्यय होता है। इसके बाद भी उच्च गुणवत्ता वाले आलू बीज की हमेशा कमी देखने को मिलती है। मुख्य रूप से पश्चिम बंगाल, ओडिशा, कर्नाटक, महाराष्ट्र और गुजरात कुछ ऐसे राज्य हैं, जहां आलू की भरपूर पैदावार होती है। बीज आलू पैदा करना मुश्किल है। इसलिए इन क्षेत्रों के लिए बीज आलू दूसरे प्रांतों से ही मंगवाना पड़ता है। एक अनुमान के अनुसार देश में प्रतिवर्ष 50 से 60 लाख टन बीज आलू की जरूरत होती है। इसमें से अधिकांश मात्रा की आपूर्ति नहीं हो पा रही है। इस कमी को पूरा करने के लिए अभी भी उन्नत बीज आलू उत्पादन की आवश्यकता है। इस तरह से बीज आलू उत्पादन में व्यवसाय की संभावनाओं को देखा जा सकता है। बीज आलू उत्पादन के लिए कई विधियां विकसित की गयी हैं, जिनमें से मुख्य विधियां निम्न प्रकार से हैं:

ऊतक संवर्धन बीज विधि

इस विधि में प्रयोगशाला में ऊतक संवर्धन से पौधे तैयार कर कीटरोधी जालीघर में आलू के छोटे कंद पैदा किए जाते हैं। इनसे आगे के 2 से 4 वर्ष तक पुन: बीज उत्पादन कर किसानों को उच्च गुणवत्ता के बीज आलू की सप्लाई की जाती है। ऐसी प्रयोगशाला लगाने में लगभग 1.5 से 2 करोड़ रुपये तक खर्च आ जाता है। ऊतक संवर्धन प्रयोगशाला स्थापित करने के लिए भारत सरकार द्वारा सब्सिडी भी दी जाती है। इस प्रकार ऊतक संवर्धन द्वारा बीज आलू उत्पादन उद्यम स्थापित करने का एक बेहतर विकल्प है।

जालीघर में बीज आलू उत्पादन

इस विधि द्वारा उच्च गुणवत्ता के ऊतक संवर्धन द्वारा तैयार पौधों या मिनी कंदों को

*भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान केंद्र, जालंधर

लेकर कीटरोधी जालीघर में बीज आलू पैदा किया जाता है। इस बीज को आगे 2 से 3 वर्ष तक खेत में बढ़ाकर किसानों को दिया जा सकता है और मुनाफे वाला व्यवसाय स्थापित किया जा सकता है।

अन्य विधियां

बीज आलू उत्पादन की अन्य विधियों में ब्रीडर या फाउंडेशन बीज को खेत में लगाकर सर्टिफाइड बीज पैदा किया जा रहा है। इस तरह से किसी भी विधि को अपनाकर एक लाभदायक व्यवसाय किया जा सकता है।

खाने एवं प्रसंस्करण के लिए आलू उत्पादन

आलू की कुल उपज का 50 प्रतिशत से भी अधिक भाग ताजा उपभोग में काम आता है। उपभोक्ताओं की बढ़ती जागरूकता के कारण अब ताजे उपभोग के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले आलू में गुणवत्ता, कम मीठापन एवं आकार की समानता अत्यधिक महत्व रखती है। यही नहीं अब कई सुपर स्टोर एवं खुदरा मूल्य की दुकानों पर कम शर्करा वाला आलू सामान्य आलू की तुलना में अधिक दामों पर उपलब्ध है। इसके अलावा आलू की कुछ ऐसी किस्में भी विकसित की गई हैं, जो कि खाने में कम मीठी एवं स्वाद में सामान्य उपलब्ध आलू से कई गुना बेहतर हैं। इस प्रकार के आलू उगाकर उन्हें प्रीमियम दामों पर 1 से 5 कि.ग्रा. की पैकिंग में बेचा जा सकता है। इस प्रकार विशेष प्रकार की किस्मों को उगाकर उनसे एक लाभदायक व्यवसाय किया जा सकता है। इसी प्रकार यदि हम प्रसंस्करण की बात करें तो आलू चिप्स, फ्रेंच फ्राइज एवं अन्य प्रसंस्करित उत्पादों को बनाने के लिए आलू में कुछ न्यूनतम विशेषताओं का होना अनिवार्य होता है। इसके साथ ही प्रसंस्करण वाले आलू का भंडारण खाने योग्य आलू से अलग होता है। प्रसंस्करण योग्य आलू की उपलब्धता कम होने के कारण उद्यमियों की मांग पूरी भी नहीं हो पाती है। इस प्रकार यह कहना गलत नहीं होगा कि प्रसंस्करण योग्य आलू की खेती से संबंधित प्रशिक्षण प्राप्तकर एक लाभदायक व्यवसाय किया जा सकता है।

आलू उत्पादन के कृषि यंत्रों का व्यापार

आलू फसल उत्पादन एक बहुत ही श्रमसाध्य कार्य है। इसकी खेती में प्रयोग होने वाले व भिन्न कृषि कार्यों के लिए तरह-तरह के यंत्रों का विकास किया गया है। इनके उपयोग से आलू की वैज्ञानिक विधि से बिजाई, गुड़ाई एवं खुदाई करके भरपूर पैदावार आसानी से ली जा सकती है। भारत में लगभग 2.1 मिलियन हैक्टर क्षेत्र में आलू का उत्पादन किया जाता है। इसमें आलू के लिए विकसित किए गए आधुनिक कृषि यंत्रों की एक अहम् भूमिका है। आलू उत्पादन वाले क्षेत्रों में इन उपकरणों/यंत्रों का बहुत बड़ा बाजार है, जिसमें अच्छी गुणवत्ता वाले यंत्रों की मांग बहुत अधिक है। कुछ छोटे-बड़े उद्यमियों ने इन आधुनिक यंत्रों के उत्पादन व बिक्री में अपना व्यापार स्थापित किया है और वे इन तकनीकों को किसानों तक पंहुचा रहे हैं। इसके अलावा इस क्षेत्र में अच्छी गुणवत्ता वाले यंत्रों का निर्माण व आपूर्ति की बहुत आवश्यकता है। इस संदर्भ में आलू में उपयोग

ऐरोपोनिक्स बीज प्रणाली

ऐरोपोनिक्स तकनीक से 10-15 गुना ज्यादा आलू बीज उत्पादन

ऐरोपोनिक्स बीज आलू पैदा करने की एक नवीनतम तकनीक है। इसमें ऊतक संवर्धन द्वारा बने पौधों को मृदा की बजाय हवा में उगाया जाता है। इस तकनीक द्वारा मृदा की तुलना में 8 से 15 गुना ज्यादा बीज आलू के कंद मिलते हैं। ऐरोपोनिक्स बीज प्रणाली स्थापित करने के लिए 50 से 120 लाख तक का खर्च आता है और कमाई भी अच्छी होती है।

आलू की बिजाई में उपयोगी यंत्र

आलू की बिजाई के लिए विभिन्न प्रकार के कृषि यंत्रों का विकास किया गया है। इन यंत्रों से बिजाई करने से पहले फर्टिलाइजर ड्रिल की सहायता से उचित मात्रा में उर्वरक को डाला जाता है।

बैल्ट कप टाईप प्लांटर और स्वचालित प्लांटर से आलू की बिजाई

आंशिक स्वचालित प्लांटर

दो प्रकार के आंशिक स्वचालित प्लांटर-रोटरी मैगजीन टाईप एवं बैल्ट टाईप से आलू की बिजाई की जा सकती है। इन मशीनों में पंक्तियों की संख्या 2 या 4 हो सकती है। मशीन जैसे-जैसे आगे बढ़ती है, सीट पर बैठा चालक एक-एक आलू को घूमती हुई चक्की के खांचों/बैल्ट के कप में डालता जाता है।

पूर्णतः स्वचालित प्लांटर

यह एक बेहतरीन मशीन है, जो अपने आप आलू कंद को बीज वाले डिब्बे में से उठाकर जमीन पर ठीक जगह पर गिराती है। इसमें किसी चालक की जरूरत भी नहीं पड़ती और काम भी आंशिक स्वचालित मशीन से लगभग दोगुना होता है।

इस प्रकार के यंत्र आलू उत्पादन वाले क्षेत्र जैसे पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार, कर्नाटक, गुजरात आदि में बहुत प्रचलित हैं तथा प्रतिवर्ष इनकी मांग बढ़ रही है।

आलू खुदाई

आलू की खुदाई के लिए डिगर और पोटेटो कंबाइन हार्वेस्टर

आलू की खुदाई करना एक बहुत ही कठिन कार्य है। इसमें एक किलो आलू को लगभग 25-30 कि.ग्रा. मृदा में से अलग करना पड़ता है। आलू की खुदाई के लिए विभिन्न यंत्र जैसे-ब्लेड टाइप डिगर, कम्पन डिगर, एलीवेटर डिगर आदि विकसित किए गए हैं। ये सभी यंत्र आलू की खुदाई के लिए बहुत ही प्रचलित हैं। इसके अलावा हाल ही में सीपीआरआई द्वारा पोटेटो कंबाइन हार्वेस्टर विकसित किया गया है। इसकी सहायता से आलू की खुदाई, खेत से आलू उठाना, छांटना एवं पैकेजिंग जैसे सभी कार्य खेत में ही एक साथ किए जा सकते हैं। आने वाले समय में यह मशीन आलू की खुदाई के लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगी।

होने वाले आधुनिक यंत्रों के बारे में संक्षिप्त जानकारी आगे दी जा रही है।

खेत की तैयारी में उपयोगी यंत्र

आलू की बिजाई के लिए गहरी जुताई एवं भुरभुरी मृदा के साथ-साथ समतल खेत की आवश्यकता होती है। इस प्रकार खेत की तैयारी सबसॉयलर, डिस्क हैरो, कल्टीवेटर, प्लांटर (पटेला), रोटावेटर, लेज़र लेवलर आदि यंत्रों के उपयोग से पूर्ण की जाती है।

खरपतवार नियंत्रण एवं मृदा चढ़ाने वाला यंत्र

खरपतवार नियंत्रण के लिए बैल या ट्रैक्टरचालित कल्टीवेटर/त्रिफाली एवं मृदा चढ़ाने के लिए रिजर नामक यंत्र का प्रयोग बिजाई से 20-25 दिनों बाद किया जाता है।

पौध संरक्षण

आलू को विभिन्न तरह के कीट-पतंगों एवं रोगों से बचाने के लिए तरह-तरह की जहरीली दवाइयों का छिड़काव करना पड़ता है। इसके लिए हस्तचालित नैपसैक स्प्रेयर और ट्रैक्टरचालित स्प्रे मशीन का उपयोग किया जा सकता है। ट्रैक्टरचालित मशीन से कम समय में अधिक क्षेत्र में छिड़काव करके फसल को नुकसान से बचाया जा सकता है।

आलू का वर्गीकरण एवं संभाल

ग्रेडिंग एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। ग्रेडेड आलू के बाजार में अपेक्षाकृत अच्छे दाम मिल जाते हैं। इस कार्य के लिए विभिन्न प्रकार के ग्रेडर जैसे-रबर का जालीनुमा ग्रेडर, रबर रोलर ग्रेडर, कोनिकल ग्रेडर आदि विकसित किए गए हैं। इनसे आलू की ग्रेडिंग की जा सकती है। यह मशीन एक घंटे में 40-100 क्विंटल तक आलू का वर्गीकरण कर सकती है।

उद्यम की दृष्टि से आलू एक बहुत ही महत्वपूर्ण फसल है, जिसमें बीज आलू से लेकर विभिन्न खाद्य उत्पाद बनाने तक की प्रक्रिया के हर चरण पर लाभकारी व्यवसाय की अपार संभावनाएं हैं। किसी भी व्यवसाय को विकसित करने की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि उत्पादन एवं उससे जुड़े व्यवसाय को कौन-कौन से कारक किस हद तक और कैसे प्रभावित करते हैं। किसी भी व्यवसाय को करने से पहले उस व्यवसाय के सभी चरणों से जुड़ी छोटी से छोटी जानकारी का पता होना अति आवश्यक है। इसलिए किसी भी व्यवसाय को प्रारंभ करने से पहले उस व्यवसाय से संबंधित संस्था से प्रशिक्षण लेना आवश्यक होता है। ■

भाकृअनुप की लोकप्रिय पत्रिका

'फल फूल' मार्च-अप्रैल, 2020 अंक के प्रमुख आकर्षण

- ऑर्किड्स के हानिकारक कीट एवं उनका प्रबंधन
- फलों के प्रसंस्करण से बढ़ाएं आमदनी
- टमाटर में ग्राफ्टिंग विधि
- खरीफ प्याज की उन्नत खेती
- सोलेनेसी कुल की सब्जियों में समन्वित रोग कीट नियंत्रण
- सब्जी मटर की वैज्ञानिक खेती
- दार्जिलिंग मंदारिन संतरे की उत्पादकता बढ़ाने की चुनौती
- पोषण सुरक्षा में फलों का योगदान
- मचान विधि द्वारा लतावर्गीय सब्जियों से अधिक उपज
- बदलते परिवेश में गृहवाटिका की उपयोगिता
- सब्जियों के उत्पादन में पोषक तत्वों का महत्व
- अतिरिक्त आमदनी के लिए फलदार वृक्षों में अंतःसस्यन
- बटन मशरूम उत्पादन से समृद्धि
- मार्च-अप्रैल में बागों की देखभाल

संपर्क सूत्र: व्यवसाय प्रबंधक, भाकृअनुप-कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, कैब-1,
पूसा गेट, नई दिल्ली-110012 (दूरभाष: 25843657)

लाल कंदीय आलू की नवीनतम उन्नत किस्में

वैश्विक आलू कॉन्क्लेव 2020

शम्भू कुमार*, **जागेश कुमार तिवारी**** और **राजेश कुमार सिंह****

आलू की खेती मुख्यतः पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब, गुजरात, ओडिशा, असोम, छत्तीसगढ़, झारखंड आदि प्रदेशों में बड़े पैमाने पर की जाती है। आलू फसल के अंतर्गत आने वाले कुल क्षेत्रफल के लगभग एक चौथाई भाग में लाल कंदीय आलू की खेती की जाती है। खासकर, बिहार व पूर्वी उत्तर प्रदेश में लाल आलू की खेती अधिक क्षेत्र में की जाती है। यहां के उपभोक्ताओं की पहली पसंद लाल आलू है। कश्मीर के उपभोक्ता लाल छिलके वाले आलू को मांस के साथ पकाने में ज्यादा रुचि रखते हैं। इसके साथ ही उपभोक्ताओं की लाल कंदीय छिलके वाले आलू की मांग को देखते हुए पंजाब प्रांत के मोगा एवं गुरदासपुर क्षेत्र के कृषक भी अब लाल कंदीय किस्मों के बीज की मांग करने लगे हैं। लाल छिलके वाले कंदों के लिए उपभोक्ता/ग्राहक सफेद कंदों की तुलना में अधिक कीमत अदा करते हैं।

भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला द्वारा पूर्व में लाल छिलके तथा मध्यम परिपक्वता (90-100 दिन) वाली किस्में जैसे कुफरी रेड, कुफरी सिन्दूरी, कुफरी लालिमा आदि का विकास किया गया था। इनके कन्द लाल, गोल आकार, मध्यम गहरी आंखों वाले तथा पिछेता झुलसा सहिष्णु थे। विगत कुछ वर्षों में लाल छिलके वाली किस्मों के विकास में संस्थान द्वारा काफी शोध किया गया। कुफरी कंचन, कुफरी अरुण, कुफरी ललित, कुफरी केसर तथा कुफरी माणिक जैसी नवीनतम उन्नत किस्मों को विकसित किया गया है, जिनकी विशेषताएं निम्न हैं:

कुफरी ललित

कुफरी कंचन

- वर्ष 1999 में जारी किया गया
- कंदों का रंग गहरा लाल तथा लम्बे अंडाकार, गहरी आंखें एवं क्रीमी गूदा
- परिपक्वता 90-100 दिन
- उपज क्षमता 25-30 टन प्रति हैक्टर

*भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, पटना (बिहार); **भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला (हिमाचल प्रदेश)

- उत्तम भण्डारण क्षमता
- पिछेता झुलसा रोग प्रतिरोधी
- धीमी बीज ह्रास दर

कुफरी अरुण

- वर्ष 2005 में जारी किया गया
- लाल रंग का कंद, अंडाकार, उथली आंखें, क्रीमी गूदा
- परिपक्वता 80-90 दिन
- उपज क्षमता 30-35 टन प्रति हैक्टर
- कंदों का रखरखाव मध्यम दर्जे का
- पिछेता झुलसा रोग के लिए कुछ हद तक प्रतिरोधी

कुफरी कंचन

कुफरी केसर

- वर्ष 2017 में संस्थान द्वारा जारी किया गया
- लाल रंग का कंद
- परिपक्वता 80-90 दिन
- उपज क्षमता 30-35 टन प्रति हैक्टर
- अंडाकार गोल कंद, मध्यम गहरी आंखें एवं पीला गूदा
- खाने में सुस्वाद, शुष्क पदार्थ 19 प्रतिशत, उतम भंडारण एवं 6 सप्ताह कंद की सुषुप्तावस्था
- पिछेता झुलसा रोग प्रतिरोधी

कुफरी ललित

- वर्ष 2013 में जारी किया गया
- लाल गोल कंद, मध्यम गहरी आंखें एवं पीला गूदा
- परिपक्वता 90-100 दिन
- उपज क्षमता 30-35 टन प्रति हैक्टर
- खाने में सुस्वाद, उत्तम भंडारण क्षमता, झुलसा रोग प्रतिरोधी, शुष्क पदार्थ 18 प्रतिशत और 6 सप्ताह से ज्यादा कंद की सुषुप्तावस्था

कुफरी नीलकण्ठ

हाल ही में संस्थान द्वारा पोषकता से भरपूर बैंगनी छिलके वाली किस्म कुफरी नीलकण्ठ का विकास किया गया है। इसकी मांग में दिन-प्रतिदिन बढ़ोतरी हो रही है। इस किस्म की विशेषताएं नीचे दी जा रही हैं:

- वर्ष 2018 में जारी किया गया
- हल्का बैंगनी छिलके वाला कंद, क्रीमी सफेद रंग का गूदा, गोल कंद
- परिपक्वता 100 दिन
- एंटीऑक्सीडेंट एंथोसायनिन पिग्मेंट की प्रचुर मात्रा
- पिछेता झुलसा रोग प्रतिरोधी
- शरीर में अत्यधिक प्रतिक्रियाशील अणु (फ्री रेडिकल्स) को नियंत्रित रखने की क्षमता
- शरीर में रोग प्रतिरोधात्मक क्षमता में बढ़ोतरी करता है
- उपज क्षमता 35-40 टन प्रति हैक्टर
- मध्यम दर्जे की भण्डारण क्षमता

कुफरी माणिक

- वर्ष 2019 में जारी किया गया
- गहरा लाल कंद

कुफरी माणिक

- अंडाकार गोल कंद, मध्यम गहरी आंखें एवं पीला गूदा
- परिपक्वता 90-100 दिन
- उपज क्षमता 30-35 टन प्रति हैक्टर
- खाने में सुस्वाद, शुष्क पदार्थ 19 प्रतिशत एवं पोषक तत्वों (एंथोसायानिन, कैरोटिन, लोहा, जिंक, कॉपर आदि) से भरपूर
- उत्तम भंडारण क्षमता एवं झुलसा रोग प्रतिरोधी

इस प्रकार, किसान लाल छिलके वाली आलू की उन्नतशील प्रजातियों की खेती कर अपनी आय बढ़ा सकते हैं तथा आर्थिक समृद्धि की ओर अग्रसर हो सकते हैं।

कुफरी अरुण

आलू में खरपतवार प्रबंधन

शिव प्रताप सिंह*, **राजेश कुमार सिंह****, **संजय कुमार शर्मा***, **मुरलीधर जे. सदावर्ती***, **वी.के. दुआ****, **संजय रावल*****, **श्याम कुमार गुप्ता*** और **वाई.पी. सिंह***

आलू फसल में पाये जाने वाले मुख्य खरपतवार क्षेत्रानुसार विभिन्न प्रकार के होते हैं। इन्हें मुख्यत: दो उपसमूहों में रखा जाता है: मैदानी और पहाड़ी क्षेत्रों में होने वाले खरपतवार। खरपतवारों की उपस्थिति एवं प्रबलता विभिन्न कृषि जलवायुवीय क्षेत्र, फसल तंत्र एवं प्रबंधन परिस्थितियों के अनुसार भिन्न-भिन्न होती है। *साइपेरस रोटेंडस, चीनोपोडियम एल्बम, एनागेलिस आरवेन्सिस, फेलरिस माइनर, पोआ एनुआ, मिलीलोटस इन्डिका, पालीपोगोन मोनस्पलिएन्सिस, कोरोनोपस डिडाइमस* एवं *मेडिकागो डेन्टिकुलाटा* आलू के प्रमुख खरपतवार हैं।

सिंधु गंगा के मैदानों में आलू की फसल में पाये जाने वाले प्रमुख खरपतवार हैं: *साइनोडोन डैक्टाइलोन,* *साइप्रस रोटडंस, ट्राईएन्थमा मोनोगाइना, चीनोपोडियम एल्बम, पोआ ऐनुआ, एनागेलिस आरवेन्सिस, मिलिलोटस स्पेसीज, सोनकस ओलरेसियस* एवं *विसिया सेटाइवा*। पहाड़ों पर पाये जाने वाले मुख्य खरपतवारों में शामिल हैं: *एमारेन्थस विरिडिस, चिनोपोडियम स्पेसीस, ऑक्जेलिस स्पेसीस, डिजिटेरिया सेनगुइनेलिस, सिटेरिया ग्लेयुका, स्परगुला आरवेन्सिस* एवं *मिलीलोटस*

मीठा बथुआ

*भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान-क्षेत्रीय केन्द्र, ग्वालियर-474020, (मध्य प्रदेश); **भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला-171001 (हिमाचल प्रदेश); ***भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान-क्षेत्रीय केन्द्र, मेरठ-250110 (उत्तर प्रदेश)

जंगली पालक

चौलाई

सफेदा

दूधिया घास

सारणी 1. आलू फसल के प्रमुख खरपतवार

वैज्ञानिक नाम	सामान्य नाम	प्रचलित नाम
मैदानी क्षेत्रों के खरपतवार		
एमरेन्थस विरिडिस	पिगबीड	जंगली चौलाई
एनागेलिस आरबेन्सिस	पिम्परनल	कृष्णनील
एस्फाईडिलस टेनयूफोलियस केवन	वाईल्ड ओनियन	प्याजी
एविना फेटुआ	वाइल्ड ओट	जंगली जई
चिनोपोडियम एल्बम	लैम्बस क्वाटर्स	बथुआ
चिनोपोडियम मुरेल	गूज फूट	खरबथुआ
सिरसीयम आरवेन्स	कनाडा थ्रिस्टेल	कटीला
कन्वोल्वुलस आरवेन्सिस	फील्ड विनबीड	हिरणखुरी
कोरोनोपस डाइडिमस	स्विनक्रेस	जंगली हेलों
साइनडोन डैक्टीलोन	बरमूडा ग्रास	दूब
साइपेरस इरिया	येलो नटसेज	मोथा
साइपेरस रोटेंडस	परपल नटसेज	मोथा
मिलीलोटस अल्वा	व्हाइट स्वीट क्लोवर	सफेद सैंजी
मिलीलोटस इंडिका	येलो स्वीट क्लोवर	पीली सैंजी
ऑक्जेलिस कोरनीकुलाटा	इंडियन सोरेल	खट्ठी बूटी
ऑक्जेलिस लेटीफोलिया	वुड सोरेल	खट्ठी मीठी घास
फेलेरिस माइनर	केनेरी ग्रास	गुल्ली डंडा
पोआ एनुआ	ब्लू ग्रास	बुन
सोलेनम नाइग्रम	ब्लैक नाइट सैड	मकोय
सोनकस एलेरियस	सा थिस्टेल	सा थिस्टेल
सटेरिया गुआ	फॉक्सटेल	बनरी
ट्राइऐन्थेमा मोनोगाइना	कारपेटबीड	पत्थरचटा
विसिया सेटाइवा	कॉमन वेच	अंकरी
पहाड़ी क्षेत्रों के खरपतवार		
एमारेन्थस विरिडिस	पिगबीड	जंगली चौलाई
विन्डेंनस पिलोसा	बेगर्स स्टिक	डिपमाल
चिनोपोडियम एल्बम	कॉमन लैम्बस क्वाटर्स	बथुआ
चिनोपोडियम मुरेल	गूज फूट	खरबथुआ
कोमेलेना बेंगालेंसिस	ट्रापिकल स्पाइडर वोर्ट	कनकौआ
साइनीडॉन डेक्टाइलोन	बरमूडा ग्रास	दूब
डिजीटेरिया सेंनगुई नेलिस	क्रेब ग्रास	--
इकाइनोक्लोआ क्रूगेली	बैमयार्ड ग्रास/वाटर ग्रास	सांवा
मिलीलोटस इंडिका	एनुअल येलो स्वीट क्लोवर	पीली सैंजी
ऑक्जेलिस कोरनीकुलाटा	बुड सोरेल	खट्ठी बूटी
पेनिसिटम क्लेन्डेस्टियम	किकुआ ग्रास	किकुआ ग्रास
रूमैक्स स्पेसिस	--	जंगली पालक
सिटेरिया ग्लाउका	फॉक्सटेल	--
स्परगुला आरवेन्सिस	कौम स्परी	बुन्धानिया

स्पेसीस। असम में कुल 33 खरपतवारों की प्रजातियां आलू की फसल में पायी जाती हैं। इनमें *चिनोपीडियम एल्बम, एक्सोनोपस काम्प्रेसस* एवं *साइनाडोन डेक्टाइलोन* प्रमुख खरपतवार हैं। मेघालय में 42 खरपतवार प्रजातियां आलू के खेतों में पंजीकृत की गयी हैं। इनमें द्विबीज पत्री/एक बीज पत्री खरपतवारों का अनुपात 2.4:1 है। नीलगिरि पहाड़ियों (तमिलनाडु) में आलू के खेतों मे पाये जाने वाले प्रमुख खरपतवारों में *पोलीगोनम निपेलेन्स, कोरोनेपस डेटाइमस* एवं *स्परगुला आर्वेसिस शामिल हैं*। हरियाणा में आलू के खेतों में किये गये सर्वेक्षण में कुल 23 प्रकार के खरपतवार देखे गये। मध्य उत्तर प्रदेश में आलू फसल को संक्रमित करने वाले प्रमुख खरपतवार *चिनोपोडियम*

सारणी 2. प्रमुख खरपतवारनाशी एवं उनकी मात्रा

खरपतवारनाशी/फसल	सक्रिय तत्व/हैक्टर	पानी (लीटर)
एलाक्लोर 50 प्रतिशत ई.सी. (कपास, मक्का, मूंगफली, सोयोबीन)	2-2.5 कि.ग्रा.	250-500
एनिलोफॉस (रापित धान)	0.3-0.45 कि.ग्रा.	500-600
एट्राजिन 50 प्रतिशत (मक्का)	0.5-1.0	500-700
बेंटाजोन 480 ग्राम/लीटर (सोयोबीन, रोपित धान)	960	500
ब्यूटाक्लोर 50 प्रतिशत ई.सी.	1.25-2.0	250-500
क्लोडिनाफास-प्रोपाजिन 15 प्रतिशत डब्ल्यूपी गेहूं (गुल्ली) डंडा	60 ग्राम	400 लीटर
क्लोमाजोन 50 प्रतिशत ई.सी. (सोयोबीन, रोपित धान, गन्ना)	0.75-1.0	500-600
2,4 एमीन साल्ट 58 प्रतिशत (मक्का, गेहूं, ज्वार, आलू, गन्ना)	0.5	400-500
फ्लूक्लोरालिन 45 प्रतिशत ई.सी. (कपास, सोयोबीन)	0.9-1.0 कि.ग्रा.	500-800
हैलोसल्फ्यूरॉन मिथाइल 75 प्रतिशत डब्ल्यूजी (मोथा नियंत्रण-गन्ना, मक्का, लौकी)	60-67.5	375
इमेजाथापिर 10 प्रतिशत एसएल (सोयोबीन, मूंगफली-बुआई के 7-14 दिनों के अंदर उपयोग)	100 ग्राम	500-600
आइसोप्रोट्यूरॉल 75 प्रतिशत डब्ल्यूपी (गेहूं)	1 कि.ग्रा.	750
मेट्रीब्यूजिन 70 प्रतिशत डब्ल्यूपी (सोयाबीन, गेहूं, आलू)	0.35-0.525	750-1000
मेटासल्फ्यूरॉन मिथाइल 20 प्रतिशत डब्ल्यूपी (गेहूं, धान, गन्ना मोथा, गाजर घास इत्यादि)	4 ग्राम	500-600
ऑक्साडायरजिल 6 प्रतिशत ई.सी.	100 ग्राम	500
ऑक्सीफ्लोरफेन 23.5 प्रतिशत ई.सी. (प्याज, आलू, मूंगफली)	100-200 ग्राम	500-750
पेंडीमेथालिन 30 प्रतिशत ई.सी. (गेहूं, धान, कपास, सोयाबीन, अरहर)	0.75-1.0 कि.ग्रा.	500-700
पैराक्वाट डाईक्लोराइड 24 प्रतिशत एसएल	0.5 कि.ग्रा.	500
क्यूजालोफाइथाइल 5 प्रतिशत ई.सी. (सोयाबीन, कपास, मूंगफली, उड़द, प्याज)	37.5-50 ग्राम	500

मोथा

खर बथुआ

गाजर घास

गुल्ली डंडा

दूब घास

एल्बम, एनागेलिस आरवेन्सिस, मिलीलोटस इन्डिका, वीसिया सेटाइवा एवं साइपेरस रोटेन्डस हैं।

खरपतवार प्रबंधन तकनीक

विभिन्न आलू उत्पादक क्षेत्रों में खरपतवारों के नियंत्रण का अत्यधिक महत्व है:

- विभिन्न खरपतवारों के लिये अलग-अलग विधियां अपनाकर फसल को नुकसान से बचा सकते हैं।
- फसलचक्र, जमीन को खरपतवाररहित करने का सर्वोत्तम उपाय है। खरपतवार नियंत्रण की कोई भी विधि इतनी प्रभावकारी, आर्थिक रूप से सक्षम नहीं हैं, जितनी जुताई व फसलों का चक्रण है।
- एक प्रकार का प्रबंधन चाहने वाली फसलों की ग्रुपिंग-एक स्पेसीज, अंत: व अन्तर पौधे से पौधे की दूरी चाहने वाली फसलें एक साथ लगायें।

हवा को प्रदूषण मुक्त बनाने वाले पौधे

वायुमंडल में तेजी से बढ़ता हुआ प्रदूषण लोगों के स्वास्थ्य को प्रभावित कर रहा है। इससे बचने के लिए लोग तरह-तरह के प्रयोग कर रहे हैं। मास्क लगाने से लेकर खानपान पर लोग विशेष ध्यान दे रहे हैं। कुछ पौधे ऐसे हैं, जिन्हें घरों के अंदर लगाकर ताजी और साफ हवा पाने के साथ ही प्रदूषण से अपने स्वास्थ्य को सुरक्षित रखा जा सकता है।

राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, लखनऊ ने कुछ ऐसे पौधों की सूची बनाई है, जो धूल को फिल्टर करते हैं और उन्हें अवशोषित कर उनके प्रभाव को कम कर देते हैं। आइए जानते हैं प्रदूषण हटाने वाले ऐसे पौधे कौन-कौन से हैं, जो दूषित हवा को शुद्ध करते हैं।

ऐरेका पाम

यह पौधा लगभग तीन-पांच फीट की ऊंचाई तक बढ़ता है। इसके लिए उतनी रोशनी भी काफी है, जितनी कि खिड़की से अंदर आती है। ये पौधे कम पानी में भी जीवित

रह लेते हैं। इस प्रकार इनडोर पौधों के रूप में ये उपयोगी पौधे हैं। ये हवा से जाइलिन और टोल्यून फिल्टर करने में मदद करते हैं और एक प्रभावी ह्यूमिडिफायर के रूप में भी काम करते हैं।

तुलसी

यह पौधा भी हवा को शुद्ध करने में अहम् भूमिका निभाता है। वायु से कार्बन डाइऑक्साइड को फिल्टर करने में यह लाभकारी है। तुलसी के पौधे को लगाना काफी आसान है। इसे कम रखरखाव की जरूरत होती है और इस पौधे में कई औषधीय गुण होते हैं। इसके अलावा यह हवा को शुद्ध करने और वायु की गुणवत्ता में सुधार करने में भी मदद करता है। इसे एक साधारण गमले में

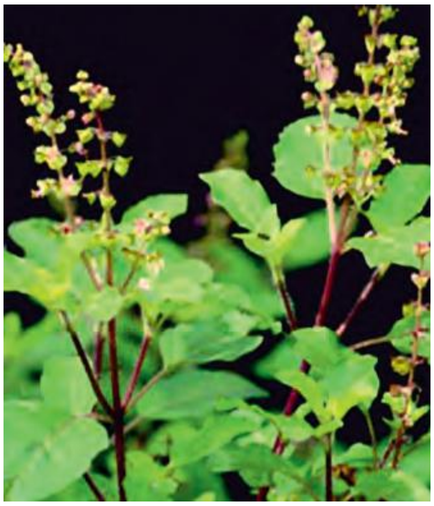

लगाया जा सकता है। इसके लिए नियमित सूर्य की रोशनी की आवश्यकता होती है, इसलिए इस पौधे को रखने के लिए सबसे अच्छी जगह धूप वाली खिड़की है। आपको बस इतना करना है कि इसे नियमित रूप से पानी मिलता रहे लेकिन सुनिश्चित करें कि पानी जरूरत से अधिक न हो।

एलोवेरा

यह एक छोटा पौधा है और बहुत आसानी से लगाया जा सकता है। इसका रखरखाव भी ज्यादा कठिन नहीं है। घर में एलोवेरा लगाने के लिए सूरज की हल्की रोशनी और थोड़ी नम मिट्टी पर्याप्त है। यह

पौधा हवा से फॉर्मेल्डिहाइड और बेंजीन को साफ करने में मदद करता है।

पीस लिली

नासा द्वारा किए शोध के अनुसार पीस लिली फॉर्मेल्डिहाइड, बेंजीन और ट्राइक्लोरेथिलीन से छुटकारा पाने के लिए बहुत अच्छी मानी जाती है। यह सांस लेने की जगह की हवा को साफ करने के मामले में सबसे अधिक उपयोगी है। पीस लिली के पौधे अन्य पौधों से भी अलग दिखते हैं और

इसके सबसे ऊपर का भाग सांप के फन की तरह खड़ा होता है। इसके पौधे को जीवित रहने के लिए कम रोशनी और साप्ताहिक पानी की आवश्यकता होती है।

गोल्डन पोथोस

यह तेजी से बढ़ने वाला पौधा है और

लटकते गमले पर सबसे अच्छा दिखता है। गोल्डन पोथोस फॉर्मेल्डिहाइड के प्रसार के खिलाफ मदद करता है। यह अंधेरे में रखे जाने पर भी हरा रहता है।

अंग्रेजी आइवी

यह हवा में मौजूद सूक्ष्मजीवों को फैलने से रोकता है, जो कि विशेष रूप से टूथब्रश में पाए जाते हैं। इस पौधे को बाथरूम के

पास रखा जाता है। यह सफाई करने वाले उत्पादों में पाए गए फॉर्मेल्डिहाइड के खिलाफ भी मदद करता है।

पौधे को ताजा रखने के लिए सूरज की साफ रोशनी की आवश्यकता होती है और अगर वे पर्याप्त प्रकाश प्राप्त नहीं करते हैं तो कीटों को आकर्षित कर सकते हैं। पानी देने के दौरान विशेष देखभाल करें और इसे फिर से पानी देने से पहले मिट्टी को सूखने दें।

वीपिंग फिग

यह पत्तेदार पौधा लंबे समय तक जीवित

रहता है अगर आप इसकी देखभाल करना सीख जाएं तो यह अद्भुत परिणाम प्रदान करता है। यह पर्दे, कालीन और फर्नीचर से निकलने वाली धूल के खिलाफ मदद करता है। वीपिंग फिग को बड़े होने में समय लगता है, लेकिन एक बार यह पूर्ण रूप में आ जाए, तब यह 10 फीट तक हो सकता है। एक चीज आपको ध्यान में रखनी चाहिए कि इस पौधे को बहुत ज्यादा इधर-उधर हिलाना नहीं चाहिए। इसकी पत्तियां आसानी से झड़ती हैं। इसे अप्रत्यक्ष रोशनी में रखें। इसके अलावा, इसे सीधे ठंड या गर्म हवा से और दरवाजे से दूर रखें। यह इसकी पत्तियों के गिरने का भी कारण बनता है। यह लंबे समय तक चलने वाला पौधा है, आप कई वर्षों तक इसकी सुंदरता का आनंद ले सकते हैं।

वार्नक ड्रैकेना

ये इनडोर प्लांट ऊंचाई में 12 फीट तक बढ़ते हैं। इनको ज्यादा सूरज की रोशनी की जरूरत नहीं होती। ये आमतौर पर वार्निश में

पाए जाने वाले प्रदूषकों से हमारी रक्षा करते हैं और वातावरण को शुद्ध करते हैं।

इस पौधे को सीधे सूर्य की रोशनी की आवश्यकता नहीं होती है। ऊंचाई में यह 12 फीट तक बढ़ सकता है, इसलिए सुनिश्चित करें कि यह एक ऐसे स्थान पर लगाया जाए, जिससे इसे पर्याप्त जगह बढ़ने को मिल सके। इसके अलावा, आप इसकी ऊंचाई को छंटनी से नियंत्रित कर सकते हैं। वार्नक ड्रैकेना के पौधों में पीले पत्ते अधिक पानी या खराब जल निकासी का संकेत माने जाते हैं। घरों में इसे पर्दे या खिड़की के पास रख सकते हैं।

हार्ट लीफ फिलोडेंड्रॉन

यह भी एक इनडोर प्लांट है, जिसे घर या ऑफिस में रख सकते हैं। यदि आपके पास पालतू जानवर हैं तो यह पौधा एक अच्छा विकल्प नहीं है। यह प्रकृति में जहरीला होता है। हार्ट लीफ फिलोडेंड्रॉन सभी प्रकार के वीओसी यानी वोलेटाइल कार्बनिक कंपाउंड्स

(अस्थिर कार्बनिक यौगिकों) को हटाने के लिए उपयोगी है।

चाईनीज एवरग्रीन प्लांट

यह पौधा कम रोशनी की स्थिति में भी खिलता है और यह कई प्रकार के वायु

प्रदूषक को फिल्टर करता है। हल्की धूप से भी इसका काम चल जाता है। चाईनीज एवरग्रीन प्लांट को पानी की जरूरत तभी पड़ती है, जब इसकी मिट्टी सूखी दिखने लगती है।

अजली-रोडोडेंड्रॉन सिमसी

इस पौधे का ग्रीक भाषा में अर्थ है 'गुलाबी पेड़'। यह एक फूलदार झाड़ी है, जिसे ठंडे क्षेत्रों में आराम से उगा सकते हैं,

लेकिन जहां रोशनी हो। यह प्लाईवुड और फोम इंसुलेशन से निकलने वाले फॉर्मेल्डिहाइड के खिलाफ मदद करता है।

बम्बू पाम

इस पौधे को रीड हथेली के नाम से भी जाना जाता है। यह छायादार घर में जीवित रह सकता है। यह बेंजीन और ट्राइक्लोरेथिलीन जैसे प्रदूषकों को फिल्टर करता है और फर्नीचर

से निकलने वाले प्रदूषक फॉर्मेल्डिहाइड और ट्राइक्लोरेथिलीन को भी फिल्टर करता है इसलिए इन्हें फर्नीचर के आसपास के स्थानों पर रख सकते हैं।

ग्रीन स्पाइडर प्लांट

मकड़ी की तरह दिखने वाला यह इनडोर प्लांट हवा को शुद्ध करने में मदद

करता है। गर्मी में इसे कम पानी की जरूरत पड़ती है, इसलिए इस पौधे को गर्मियों के मौसम में भी रखा जा सकता है। यह प्यारा पौधा बेंजीन, फॉर्मेल्डिहाइड, कार्बन मोनोऑक्साइड और चमड़े, रबड़ और मुद्रण उद्योगों में इस्तेमाल विलायकों से रक्षा करता है। यह पौधा अपने विशिष्ट आकार के पत्तों के कारण भी जाना जाता है, जो मकड़ियों की तरह लटकते हैं।

स्नेक प्लांट या नाग पौधा

यह पौधा बाथरूम के लिए सबसे उपयुक्त है, क्योंकि यह कम रोशनी और नम इलाकों में भी जीवित रह सकता है। यह फॉर्मेल्डिहाइड को फिल्टर करता है,

जो कि आमतौर पर व्यक्तिगत देखभाल में इस्तेमाल किए जाने वाले उत्पादों में पाया जाता है। यह नासा द्वारा पहचाने जाने वाले शीर्ष वायु शुद्धिकरण पौधों में से एक है। यह पौधा बढ़ने में सबसे आसान है और इसके लिए अतिरिक्त ध्यान देने की आवश्यकता नहीं होती है। आप शहर से बाहर जा रहे हैं और आपके पौधे की देखभाल करने के लिए कोई नहीं है, तो कोई चिंता की बात नहीं है।

इस पौधे को हफ्तों तक बिना पानी के जीवित रखा जा सकता है और तब भी आपको इसको लंबी, ताजा पत्तियां मिलेंगी। इस पौधे को सास की जीभ या सेंट जॉर्ज की तलवार भी कहा जाता है।

लाल-किनारे ड्रैकेना

यह जाइलिन, ट्राइक्लोरेथिलीन और फॉर्मेल्डिहाइड जैसे वार्निश गैसों को फिल्टर करता है। ये

गैस वार्निश और सीलर्स से निकलती हैं। इस पौधे की पत्तियां आगे के किनारों में लाल रंग की दिखती हैं।

रबर इनडोर प्लांट

यह पौधा एक बहुत अच्छा इनडोर प्लांट है। रबर इनडोर प्लांट इंसान और पशु के लिए

जहरीला होता है और इसलिए इसको आंखों या स्किन से दूर रखना चाहिए लेकिन एयर फिल्टर के लिए यह बढ़िया पौधा है। ■

जनवरी-फरवरी में बागों की देखभाल

राम रोशन शर्मा*, **हरे कृष्णा****, **स्वाति शर्मा**** और **विजय राकेश रेड्डी*****

जाड़े की ठिठुरन लिए जनवरी-फरवरी बागवान भाइयों के लिए महत्वपूर्ण महीने हैं। अब की मेहनत कल काम आएगी, जान लें कि कैसे। फलों के अच्छे और उच्च गुणवत्ता के उत्पादन के लिए बगिया की देखभाल अति आवश्यक है। फलदार पौधों की बहुवर्षीय प्रकृति के कारण इनकी देखभाल तथा रखरखाव धान्य फसलों से भिन्न होता है। इसी संदर्भ में महत्वपूर्ण फलों में जनवरी व फरवरी में की जाने वाली प्रमुख कृषि क्रियाओं का संक्षिप्त विवरण इस लेख में प्रस्तुत किया गया है।

आम

जनवरी में नर्सरी में लगे पौधों को पाले से सुरक्षा के लिए छप्पर से ढकना चाहिए। वहीं दूसरी ओर छोटे पौधों को भी पुआल से ढक दें। पाले से बचाव के लिए बाग में समय-समय पर हल्की सिंचाई करें। बागों की निराई-गुड़ाई एवं सफाई का कार्य करें। आम के नवरोपित बागों की सिंचाई करें।

जनवरी के प्रथम सप्ताह में आने वाले बौर में फल नहीं लगते और ये अक्सर गुच्छे का रूप धारण कर लेते हैं। ऐसे बौर को निकालकर नष्ट कर दें। आम में उर्वरक देने का यह सही समय है। नाइट्रोजन 500 ग्राम, फॉस्फोरस 500 ग्राम तथा पोटाश 700 ग्राम प्रति पौधा प्रयोग करें। इन्हें मिट्टी में मिलाकर हल्की सिंचाई कर दें। बागों की निराई-गुड़ाई एवं सफाई का कार्य करें।

फरवरी में थालों की गुड़ाई करें। फुदका या तेला (मैंगो हॉपर) के नियंत्रण के लिए थायोडॉन (0.2 प्रतिशत) तथा चूर्णिल आसिता रोग से बचाव के लिए केराथेन (20 मिली ली. प्रति 100 लीटर पानी में) का छिड़काव फरवरी के अंतिम सप्ताह में अवश्य करें। फरवरी में छोटे पौधों के ऊपर से छप्पर हटा दें। ध्यान रखने योग्य बात है कि इन्हीं दिनों पौधों पर फूल आते हैं। यदि किसी भी कीटनाशी का प्रयोग फूलों पर किया गया तो संपूर्ण परागण न होने से कम फल लगेंगे।

केला

जनवरी के प्रथम एवं तृतीय सप्ताह में सिंचाई करें ताकि पाले से बचाव हो सके। पाले से बचाव के लिए किसी पलवार (मल्च) का प्रयोग करें तथा बागों में सायंकाल में धुआं

रोगग्रसित बौर

*खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012; **भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी-221005 (उत्तर प्रदेश); ***भाकृअनुप-केंद्रीय शुष्क बागवानी अनुसंधान संस्थान, बीछवाल, बीकानेर-334006 (राजस्थान)

भी करें। पौधों को यदि सहारा न दिया हो तो बांस के डंडे से सहारा प्रदान करें।

फरवरी के प्रथम तथा तृतीय सप्ताह में सिंचाई करें। केवल एक तलवारी पत्ती (भूस्तारी) को छोड़कर पौधे के आधार से निकलने वाली अन्य पत्तियों को काट दें। नाइट्रोजन की 60 ग्राम मात्रा प्रति 10 लीटर पानी में डालकर छिड़काव करें। बागों की निराई-गुड़ाई एवं सफाई का कार्य करें।

पाले से क्षतिग्रस्त केले का बाग

नीबूवर्गीय

जनवरी में एक-दो सिंचाई करें तथा पाले से बचाने के हर संभव उपाय करें। मूलवृंत तैयार करने के लिए बीज की बुआई पॉलीथीन में करें। प्रति पौधा 400 ग्राम नाइट्रोजन, 200 ग्राम फॉस्फोरस तथा 400 ग्राम पोटाश का प्रयोग 50 कि.ग्रा. गोबर की खाद के साथ करके हल्की सिंचाई कर दें। बागों की निराई-गुड़ाई एवं सफाई का कार्य करें।

फरवरी में फूल आने से कुछ दिनों पहले सिंचाई न करें अन्यथा सभी फूल झड़ सकते हैं। यदि फूलों या फलों के गिरने की समस्या अधिक हो तो 2-4, डी (10 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में घोलकर) का छिड़काव करें। फल लगते समय पर्याप्त मात्रा में नमी बनाए रखें। नए पौधे तैयार करने के लिए फरवरी के अंत में कलिकायन (बडिंग) की जा सकती है।

अंगूर

उत्तरी भारत में अंगूर की काट-छांट के लिए जनवरी सबसे उपयुक्त समय है। काट-छांट के बाद कटे भाग पर कॉपर आक्सीक्लोराइड बोर्डो या पेस्ट लगाना न भूलें। अंगूर में प्रथम वर्ष गोबर/कम्पोस्ट खाद के अलावा 100 ग्राम नाइट्रोजन, 60 ग्राम फॉस्फेट व 80 ग्राम पोटाश प्रति पौधा देना आवश्यक है। 5 वर्ष या इससे ऊपर यह मात्रा बढ़कर 500 ग्राम नाइट्रोजन, 300 ग्राम फॉस्फेट व 400 ग्राम पोटाश हो जाती है। फॉस्फोरस की सम्पूर्ण मात्रा तथा नाइट्रोजन व पोटाश की आधी मात्रा काट-छांट के बाद जनवरी में दें। उर्वरक डालने के बाद हल्की सिंचाई करें। कटी हुई शाखाओं से 30-40 सें.मी. आकार की कलमें तैयार कर लें तथा इन्हें 10-15 दिनों तक नम भूमि में दबाने के बाद पौधशाला में लगा दें। उत्तरी भारत में अंगूर के नए बाग लगाने का भी यही उपयुक्त समय है। फरवरी में चूर्णिल आसिता रोग से बचाव के लिए केराथेन (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव करें। बागों की निराई-गुड़ाई एवं सफाई का कार्य करें।

काट-छांट किया अंगूर का पौधा

अमरूद

जनवरी में अमरूद के बागों में फलों की तुड़ाई का कार्य जारी रखें। तुड़ाई का सबसे अच्छा समय सुबह का होता है। फलों को उनकी किस्मों के अनुसार अधिकतम आकार तथा परिपक्व-हरे रंग (जब फलों की सतह का रंग गाढ़े से हल्के हरे रंग में परिवर्तित हो रहा हो) पर तोड़ना चाहिए। इस समय फलों से एक विशिष्ट सुगंध भी आती है। सुनिश्चित करें कि अत्यधिक पके फलों को तोड़े गए अन्य फलों के साथ मिश्रित नहीं किया जाए। प्रत्येक फल को अखबार में पैक करने से फलों का रंग और भंडारण क्षमता बेहतर होती है। फलों को पैक करते समय उन्हें एक-दूसरे से रगड़ने पर होने वाली खरोंच से भी बचाना

आंवला

आंवला के फलों की तुड़ाई जनवरी-फरवरी तक जारी रह सकती है। अतः इन क्षेत्रों में इस दौरान फलों से लदे वृक्षों को बांस-बल्ली की सहायता से सहारा देने की व्यवस्था की जानी चाहिए, ताकि शाखाओं को टूटने से रोका जा सके। अतः बिक्री की उचित व्यवस्था करें। इस दौरान फलों का भी विकास होता है, इसलिए सिंचाई की भी समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। परंतु ध्यान रहे कि तुड़ाई से 15 दिनों पूर्व सिंचाई रोक दी जाए ताकि फल समय से तैयार हो सकें। जिन क्षेत्रों में सिंचाई की समुचित व्यवस्था हो, उन क्षेत्रों में बसंत के आगमन के साथ ही पौध रोपण का कार्य फरवरी के दूसरे पखवाड़े से प्रारंभ किया जा सकता है जोकि मार्च तक जारी रखा जा सकता है। इसके साथ ही जिन क्षेत्रों में शीत ऋतु में पाले की आशंका हो, वहां गंधक के अम्ल (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव पूरे वृक्ष पर किया जाना चाहिए। जरूरत पड़े तो छिड़काव को दोहराएं। फरवरी में फूल आने का समय होता है जो नई पत्तियों के साथ आते हैं। इस समय सिंचाई न करें। आंवला के बाग में गुड़ाई करें एवं थाले बनाएं।

आंवले के एक वर्ष के पौधे के लिए 10 कि.ग्रा. गोबर/कम्पोस्ट खाद, 100 ग्राम नाइट्रोजन, 50 ग्राम फॉस्फेट व 75 ग्राम पोटाश देना आवश्यक है। 10 वर्ष या इससे ऊपर के पौधे में यह मात्रा बढ़कर 100 कि.ग्रा. गोबर/कम्पोस्ट खाद, एक कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 500 ग्राम फॉस्फेट व 750 ग्राम पोटाश हो जाएगी। उक्त मात्रा से पूरा फॉस्फोरस, आधी नाइट्रोजन व आधी पोटाश की मात्रा का प्रयोग जनवरी से करें। बागों की निराई-गुड़ाई एवं सफाई का कार्य भी अभी करें।

अमरूद के पुष्ट फल

स्ट्रॉबेरी के ताजा फल

चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि बक्से के आकार के अनुसार ही उनमें रखे जाने वाले फलों की संख्या निर्धारित हो। जनवरी में पत्तियों पर कत्थई रंग आना सूक्ष्म तत्वों की कमी के कारण होता है। कॉपर सल्फेट तथा जिंक सल्फेट का 0.4 प्रतिशत की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें। फरवरी में आने वाले फूलों को तोड़ दें ताकि वर्षा ऋतु में आने वाली कम गुणवत्ता वाली फसल की अपेक्षा जाड़े वाली अच्छी फसल को न लेने के लिए फूलों की तुड़ाई के अतिरिक्त नेप्थेलीन एसिटिक अम्ल (100 पीपीएम) का छिड़काव करें एवं सिंचाई कम कर दें। फरवरी के दूसरे पखवाड़े में छंटाई का कार्य शुरू किया जाना चाहिए। यह मार्च के प्रथम सप्ताह तक जारी रखा जा सकता है। पिछले मौसम में विकसित शाखाओं के 10-15 सें.मी. अग्र भाग को काट देना चाहिए। इसके अतिरिक्त टूटी, रोगग्रस्त, आपस में उलझी शाखाओं को भी निकाल देना चाहिए। छंटाई के तुरंत बाद कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (2-3 प्रतिशत) का छिड़काव अथवा बोर्डो पेस्ट का शाखाओं के कटे भाग पर लेप करना चाहिए। बागों की निराई-गुड़ाई एवं सफाई का कार्य करें। अमरूद के नवरोपित बागों की सिंचाई करें।

बेर

बेर में चूर्णिल आसिता रोग अत्यधिक हानि पहुंचाता है। इससे बचने के लिए फरवरी में 0.2 प्रतिशत केराथेन का छिड़काव करें। 15 दिनों के अंतराल पर दोबारा यही छिड़काव करें। फरवरी के अंत में किसान बेर के पौधे भी लगा सकते हैं। फरवरी में बेर की अगेती किस्में पकने लगती हैं। इस फसल की तुड़ाई कर उचित बिक्री की व्यवस्था करें। बागों की निराई-गुड़ाई एवं सफाई का कार्य करें।

बेर

लीची

जनवरी में पाले से सुरक्षा के किसी उपाय का प्रबंध अवश्य करें। फरवरी में लीची में फूल आते समय सिंचाई न करें, क्योंकि इससे फूलों के गिरने का डर रहता है। फूल आने से पहले एवं बाद में पानी की समुचित व्यवस्था करें। चूर्णिल आसिता रोग के प्रकोप से बचने के लिए लीची में संस्तुत रसायनों का प्रयोग करें। कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट की आधी मात्रा अर्थात 1.5 कि.ग्रा. प्रति पौधा फरवरी में प्रयोग करें। लीची के नवरोपित बागों की सिंचाई करें। बागों की निराई-गुड़ाई एवं सफाई का कार्य करें।

स्ट्रॉबेरी

जनवरी में स्ट्रॉबेरी के खेत में निराई-गुड़ाई करें। यदि पलवार न बिछाई गई हो तो वांछित पलवार जैसे पुआल या पॉलीथीन का प्रयोग करें। फलों में उच्च गुणवत्ता प्राप्त करने के लिए फरवरी के शुरू में जिब्रेलिक अम्ल (75 पी.पी.एम.) का छिड़काव करें तथा समय पर सिंचाई करते रहें। पत्तियों पर यदि धब्बे दिखाई पड़ें तो डाईथेन-एम-45 (2 ग्राम प्रति लीटर पानी) या बाविस्टीन (1 ग्राम प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करें। पहाड़ी क्षेत्रों में किसान स्ट्रॉबेरी के केवल नए पौधे तैयार करने के लिए लगाते हैं, यदि फरवरी के अंत में पौधों पर फूल आ रहे हैं तो उन्हें तुरंत हटा दें, परंतु मैदानी भागों में किसान ऐसा न करें। मैदानी भागों में फरवरी में स्ट्रॉबेरी की फसल तैयार हो जाती है। इसे तोड़कर, 250 ग्राम के पैकेट में पैक कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें।

पपीता

पपीते को पाला अत्यधिक हानि पहुंचाता है। अतः जनवरी में पाले से बचाने के लिए पर्याप्त प्रबंध करें। पौधों को पुआल से ढक दें तथा समय पर सिंचाई करते रहें। पुआल को फरवरी के अंत में हटा दें। 25 ग्राम नाइट्रोजन, 50 ग्राम फॉस्फोरस तथा 100 ग्राम पोटाश का प्रयोग फरवरी में प्रति वृक्ष की दर से करें। बागों की निराई-गुड़ाई एवं सफाई का कार्य करें।

पपीते के नवरोपित बागों की सिंचाई करें। बागों की निराई-गुड़ाई एवं सफाई का कार्य करें।

कटहल

यदि दिसंबर में खाद एवं उर्वरक न दिए गए हों तो जनवरी में यह कार्य पूर्ण करें। छोटे पौधों की पाले से रक्षा के उपाय करें। फरवरी के अंत में मिलीबग के प्रकोप से बचने के लिए पेड़ों पर आम की भांति पॉलीथीन की पट्टी लगाएं।

लोकाट

जिन क्षेत्रों में सिंचाई की समुचित व्यवस्था हो, उन क्षेत्रों में बसंत के आगमन के साथ ही पौध रोपण का कार्य फरवरी के दूसरे पखवाड़े से प्रारंभ किया जा सकता है। यह मार्च तक जारी रखा जा सकता है। एक मीटर गहरे और एक मीटर व्यास के गड्ढे की खुदाई का कार्य वास्तविक वृक्षारोपण से कम से कम एक महीने पहले किया जाना चाहिए। जिन क्षेत्रों में दीमक का प्रकोप हो, वहां क्लोरपाइरीफॉस

लोकाट

10 मि.ली. प्रति गड्ढे की दर से प्रयोग करें। प्रति पौध 25-30 कि.ग्रा. अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर खाद दी जानी चाहिए। इसके दौरान शील्ड अथवा 'टी' कलिकायन विधि द्वारा तीन पुरानी शाखा से कालिका लेने पर पौध-प्रवर्धन में भी अपेक्षित सफलता मिलती है। उत्तरी भारत के कुछ-कुछ स्थानों पर जनवरी तक लोकाट में फूल आते हैं। फलों के सेट होने के बाद, 15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई की जानी चाहिए ताकि फलों का विकास हो सके। फरवरी में नाइट्रोजन उर्वरक की आधी खुराक दी जा सकती है, ताकि फलों की वृद्धि हो सके। यदि फलमक्खी का प्रकोप हो तो कीटनाशी इमिडाक्लोरपिड (0.5 मि.ली./प्रति लीटर) का छिड़काव फरवरी में 15 दिनों के अंतराल पर दो बार किया जा सकता है।

फालसा

उत्तर भारत में फालसे में जनवरी में गहन काट-छांट करनी चाहिए। काट-छांट के बाद कटे भागों पर बोर्डो लेप लगाएं। पौधों को उपयुक्त मात्रा में गोबर की खाद और उर्वरक दें।

अगले महीने (मार्च-अप्रैल) में भी बागों में बहुत कुछ करना है, क्या करना है जानिए अगले अंक में। ■

खजूर

जनवरी-फरवरी में खजूर के बागों में कई महत्वपूर्ण कार्य किए जाते हैं। इनमें कटाई-छंटाई, उर्वरकों का प्रयोग तथा परागण प्रमुख हैं। खजूर के पौधे एक बीज पत्रीय तथा एकल तना होने से शाखित नहीं होते हैं। व्याधिग्रस्त, सूखी, पुरानी, क्षतिग्रस्त पत्तियों को सर्दियों में हटा देना चाहिए। फल गुच्छों से सटी हुई पत्तियों के डंठलों से कांटे निकालना आवश्यक है, ताकि उनके आसपास परागण, फल गुच्छों की छंटाई, डंठल मोड़ना, रसायनों का छिड़काव, थैलियां लगाना एवं फलों की तुड़ाई आदि के कार्य सरलता से हो सकें। पत्ती को डंठल

सहित जितना संभव हो सके मुख्य तने के समीप से हटाया जाना चाहिए, ताकि मुख्य तने की सतह को चिकना रखा जा सके। फल : गुच्छा अनुपात 1 : 6 रखने पर अधिक फल उत्पादन एवं उत्तम गुणवत्ता वाले फल प्राप्त होते हैं। अच्छी फसल के लिए पूर्ण विकसित वृक्ष पर लगभग 70-100 पत्तियां होनी चाहिए। फॉस्फोरस (0.5 कि.ग्रा.) और पोटाश (0.5 कि.ग्रा.) की पूर्ण मात्रा और नाइट्रोजन की 50 प्रतिशत मात्रा (0.75 कि.ग्रा.) को फूल आने से तीन सप्ताह पहले दिया जाना चाहिए, जो विभिन्न किस्मों में जनवरी-फरवरी के दौरान होता है। इसके बाद वृक्षों की सिंचाई की जानी चाहिए।

खजूर में नर एवं मादा पुष्पक्रम अलग-अलग पौधों पर आते हैं। अच्छे उत्पादन के लिए कृत्रिम परागण किया जाता है। इसके लिए ताजे एवं पूर्ण रूप से खुले हुए नर पुष्पक्रमों को, अखबार या पॉलीथीन की चादर पर झाड़कर एकत्रित कर लेते हैं। मादा पुष्पक्रमों को, जो तुरंत खिले हों, परागकणों में डुबोए गए रूई के फाहों से दो-तीन दिनों तक लगातार प्रातःकाल परागित करें। नर पुष्पक्रमों की लड़ियों को काटकर खुले मादा पुष्पक्रम के मध्य में उल्टी करके हल्के से बांध दिया जाता है, जिससे उनमें से परागकण धीरे-धीरे गिरते रहें। जनवरी-फरवरी में लेसर डेट मोथ कीट के लार्वा परागकणों को खाकर नुकसान पहुंचा सकते हैं।

सेब तथा अन्य शीतोष्णवर्गीय फल

शीतोष्णवर्गीय फलों के बाग लगाने का सही समय जनवरी है। यदि किसी कारणवश दिसंबर में छंटनी न कर पाएं हों तो जनवरी में इन फलवृक्षों की छंटाई अवश्य करें। छंटाई, सधाई प्रणाली को ध्यान में रखकर करनी चाहिए। कटे भाग पर चौबटिया लेप लगा देना चाहिए। बागों की निराई-गुड़ाई एवं सफाई का कार्य करें।

फलदार व छोटे पौधों में गोबर की खाद तथा फॉस्फोरसयुक्त उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। कीटों एवं रोगों की रोकथाम के लिए यदि दिसंबर में कोई छिड़काव न कर पाए हों तो जनवरी के प्रथम सप्ताह में यह कार्य संपूर्ण करें। बागों में जनवरी में उर्वरक देना भी न भूलें।

सब्जियों के पौधे लगाने के हस्तचालित उपकरण

ए.पी. मगर*, बी.बी. गायकवाड़*, चेतन सावंत*,
स्वीटी कुमारी* और **अभिजीत खड़तकर***

सब्जी पौध लगाते समय, एक हाथ में पौध समेत प्रो-ट्रे, (जिसमें व्यावसायिक तौर पर सब्जी पौध तैयार की जाती है) को झुकी हुई अवस्था में पकड़कर दूसरे हाथ से जमीन में कूंड बनाना, फिर प्रो-ट्रे से पौध निकालकर कूंड़ में सही दिशा में छोड़ना-एंव उस पर जड़ तक मिट्टी से आधार देना और मिट्टी को हल्के से दबाना-ये सभी प्रक्रिया घंटों दोहराना बहुत ही कठिन परिश्रम वाला काम होता है। इस प्रक्रिया को सरलता देने में हाथ से पौध लगाने वाले कुछ उपकरणों का विकास विश्व में काफी जगह हुआ है।

हस्तचालित उपकरण

विश्व के सब्जी उत्पादन में भारत द्वितीय स्थान पर है। देश में सालाना 92 लाख हैक्टर क्षेत्र से 16 करोड़ टन सब्जियों का उत्पादन होता है, जिनमें आलू, टमाटर, प्याज, बैंगन, पत्तागोभी, फूलगोभी आदि का समावेश मुख्य रूप से होता है। हमारे देश में हर वर्ष इतनी सब्जियों की पैदावार होती है कि जो देश की घरेलू जरूरत पूरा करके दूसरे देशों में भी भेजी जाती है। सब्जियां किसानों की नगदी फसल ही नहीं बल्कि सालाना आमदनी बढ़ाने का भी काम करती है। ज्यादातर सब्जियां लेने के लिए बीजों को पौध में रूपांतरित करके कुछ दिनों बाद मुख्य खेत में प्रस्थापित किया जाता है। किसानों को सब्जी पौध लगाते समय बहुत सी कठिनाइयों से गुजरना पड़ता है, जैसे कि पौध की आयु (छः से दस सप्ताह) पूरे होने के समय पर मुख्य क्षेत्र में लगाना और श्रमिक समय पर न मिलना आदि। फिर भी किसान सब्जियां प्रत्येक वर्ष लगाता है।

पौध लगाने वाला उन्नत हस्तचालित उपकरण

पौध लगाने वाले हस्तचालित उपकरण

सारणी: पौध लगाने वाले हस्तचालित उपकरण का विवरण

सर्वसमावेशी आकार (मि.मी.)			वजन	कार्यक्षमता, पौध/मिनट	कीमत (रुपये)
ऊंचाई	लम्बाई	चौड़ाई			
920	395	225	5	15-17	1000

हाथ से पौध लगाने का उपकरण

पौध लगाने का उन्नत उपकरण विकसित किया गया है, जो चलाने में काफी आसान है। महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश काली मिट्टी वाले प्रदेश हैं, इस मृदा में भुरभुरापन लाना थोड़ा सा खर्चीला बन जाता है। इस उपकरण का वजन 5.2 कि.ग्रा. है। यह भार उपकरण को काली मृदा में बड़ी आसानी से घुसने में मदद करता है। उपकरण का अग्र निचला हिस्सा उतना ही जमीन में घुसता है, जितना पौध को लगाने वाली कूंड़ बने। फिर प्रो-ट्रे से निकाली पौध को जड़ की दिशा से पौध नली द्वारा बनाई गई कूंड़ में छोड़ा जाता है। इस उपकरण में लगे ब्रेक जैसे लीवर को धीरे-धीरे दबाते हुए उपकरण को उठाया जाता है। इसमें दो क्रियाओं का मिलाजुला प्रभाव है, जिसमें

हस्तचालित उपकरण से सब्जी बुआई

पहला तो लीवर को दबाते समय आधार वाली मिट्टी पौध को जमीन से खड़ी करती है और दूसरी जबड़ा जमीन से बाहर निकलते ही दूसरी दिशा से मिट्टी पौध को और आधार देती है। इस प्रकार पौध प्रस्थापित होने में आसान सा उपकरण पौध लगाने में सहायता करता है, जिसमें झुकाव की जरूरत नहीं है और न ही ज्यादा परेशानी। इस उपकरण की विशेषाएं सारणी में दी गई हैं। ■

*भाकृअनुप-केन्द्रीय कृषि अभियांत्रिकी संस्थान, नबीबाग, भोपाल-462038 (मध्य प्रदेश)

आलू बिन सब सून

ज्ञात जानकारी के अनुसार लगभग 7000-10000 वर्ष पहले आलू का घरेलू प्रयोग मध्य पेरु में होता था। माना जाता है कि आलू की खेती सर्वप्रथम कैरिबियन में आरंभ हुई, जहां पर इसे 'कमाटा' या 'बटाटा' के नाम से जाना जाता था। 16वीं शताब्दी में यह 'बटाटा' स्पेन पहुंचा और वहां पर इसकी खेती होने लगी तथा स्पेन से सम्पूर्ण यूरोप में 'बटाटा' का निर्यात होने लगा। इसी बीच 'बटाटा' का नाम परिवर्तित होकर 'पटाटा' बन गया, जो कि इंग्लैंड जाकर 'पोटेटो' हो गया। स्पेन से निकलकर यह 'पोटेटो' पुर्तगाल, इटली, फ्रांस, बेल्जियम तथा जर्मनी तक फैल गया। कालांतर में सम्पूर्ण यूरोप तथा एशिया के कई देशों में आलू की खेती होने लगी।

माना जाता है कि 17वीं शताब्दी के आरंभ में पुर्तगालियों ने भारत के पश्चिमी समुद्रतटों में आलू को बटाटा के नाम से उगाना शुरू किया। एक मान्यता यह भी है कि आलू भारत में 17वीं शताब्दी के अंतिम दौर में ब्रिटिश मिशनरियों के साथ आया और ब्रिटिश व्यापारियों ने उसी समय बंगाल में कलकत्ता (अब कोलकाता) के आसपास के इलाकों में इसे बेचना शुरू किया, उसी समय में पोटेटो का हिन्दी नाम आलू बना।

बढ़ता महत्व आलू का

आलू है पोषक आहार

आलू से जुड़ी खास बातें

- आलू में सोडा, पोटाश और विटामिन 'ए' तथा 'डी' भी पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं। आलू का सबसे अधिक महत्वपूर्ण पौष्टिक तत्व विटामिन 'सी' है। यूरोप में जब से आलू का प्रयोग व्यापक होता गया है, तब से स्कर्वी नामक रोग की घटनाएं बहुत कम देखने में आती हैं।
- आलू के पौष्टिक तत्वों का लाभ लेने के लिए इसे हमेशा छिलके समेत पकाना चाहिए, क्योंकि आलू का सबसे अधिक पौष्टिक भाग छिलके के एकदम नीचे होता है, जो प्रोटीन और खनिज से भरपूर होता है। आलू को उबाला, भूना या अन्य सब्जियों के साथ पकाया जाता है, इसलिए इसके पौष्टिक तत्व आसानी से हजम हो जाते हैं।

- आलू का यदि कोई भाग हरा रह गया है तो उसे काटकर निकाल देना चाहिए, क्योंकि उसमें सोलेनाइन नामक विषैला पदार्थ होता है। इसके अतिरिक्त यदि आलू में अंकुर आ गए हों, तो अंकुरित भाग काटकर निकाल देना चाहिए और उसे खाने के प्रयोग में नहीं लाना चाहिए।
- आलू में औषधीय गुण जबर्दस्त हैं। यह आंतों में सड़न की प्रक्रिया को रोकता है और पाचन प्रक्रिया में सहायक बैक्टीरिया के विकास में सहायता करता है।
- आलू यूरिक अम्ल को घोलकर निकालता है। पुरानी कब्ज, आंतों में विषाक्तता, यूरिक अम्ल से संबंधित रोग, गुर्दों में पथरी, ड्रॉप्सी आदि रोगों के इलाज में आलू पर आधारित चिकित्सा को बहुउपयोगी माना गया है। स्कर्वी रोग में आलू को आदर्श आहार औषधि माना गया है।
- प्रत्येक बार भोजन करने से पहले एक या दो चम्मच कच्चे आलुओं का रस पीने से सभी तरह के अम्ल शरीर से निकल जाते हैं और गठिया रोग में आराम मिलता है। आलू के छिलके में महत्वपूर्ण खनिज लवण भरपूर मात्रा में पाए जाते हैं।
- पाचन संबंधी रोगों में कच्चे आलू का रस बहुत उपयोगी होता है, क्योंकि यह आंतों में सूजन से आराम दिलाता है। इस रोग में आराम पाने के लिए कच्चे आलू का आधा प्याला रस भोजन से आधा घंटा पहले दिन में दो या तीन बार लेना चाहिए।
- यह आंतों की सूजन और अल्सर से भी आराम दिलाता है। पेट और आंतों के रोगों तथा विषाक्तता के मामलों में आलू के स्टार्च का इस्तेमाल एंटीइंफ्लेमेट्री (सूजन दूर करने वाले) पदार्थ के रूप में किया जाता है।
- कच्चे आलू का रस त्वचा पर दाग-धब्बे दूर करने में उपयोगी है। आलू में मौजूद पोटेशियम सल्फर, फॉस्फोरस और कैल्शियम की मात्रा त्वचा की सफाई में मदद करती है।
- आलू के गुण तभी तक अधिक प्रभावकारी रहते हैं, जब तक यह कच्चा रहता है, क्योंकि उसमें जीवित कार्बनिक परांणु होते हैं। पकाई हुई अवस्था में ये जैविक परांणु अकार्बनिक परांणु में बदल जाते हैं और उनका रचनात्मक लाभ कम हो जाता है।

पांच हजार से अधिक प्रजातियां

आज आलू की 5 हजार से अधिक प्रजातियां उगाई जाती हैं, ऐसे में अपने खाने के लिए सही आलू का चयन जरूरी है। आलू की छंटनी सिर्फ उसके रंगों के आधार पर ही नहीं बल्कि उसके पकने के आधार पर भी की जाती है। तलने और सलाद बनाने के लिए फर्म और डेंस टाइप के आलू ज्यादा सही होते हैं। वहीं, भुरभुरी किस्म पकाने और पीसने के लिहाज से सही होती हैं। ■

ISSN 0971-2984 पंजी. सं. (क्यू)-437

भा.कृ.अनु.प. के जर्नल्स एवं हैंडबुक्स

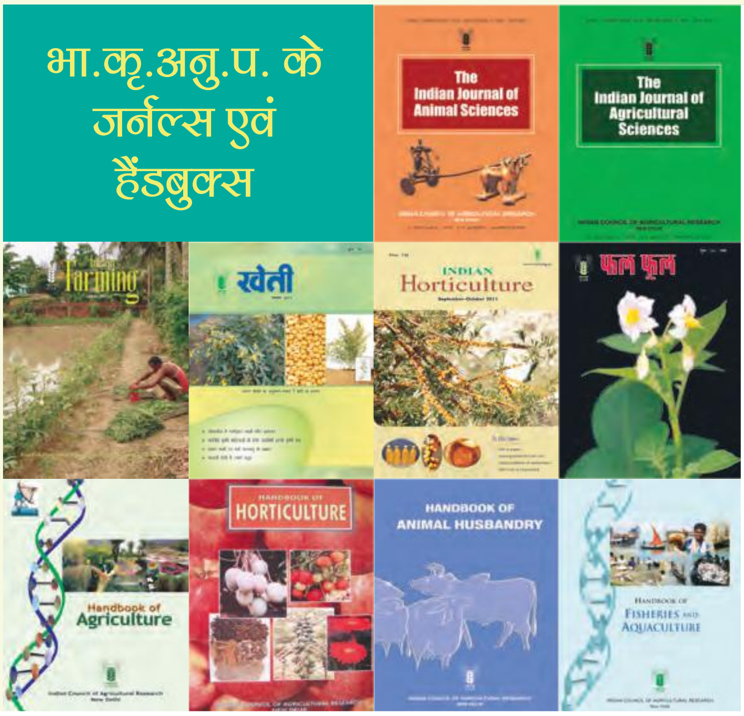

कृषि संबंधी स्वदेशी तकनीकी ज्ञान की सूची (सीडी)

भा.कृ.अनु.प. के प्रकाशन

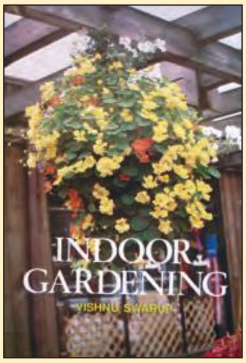

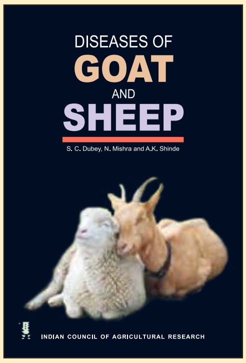

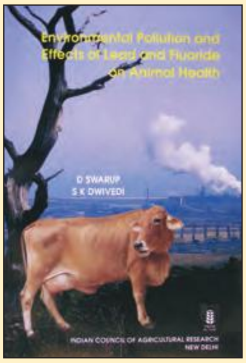

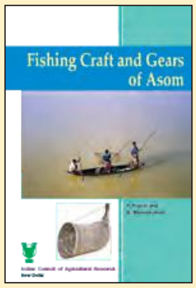

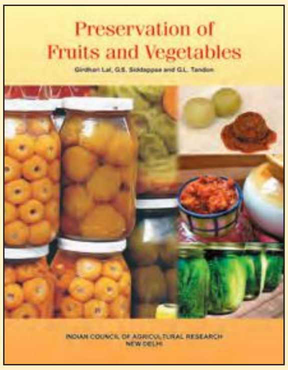

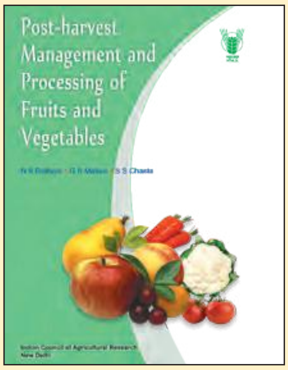

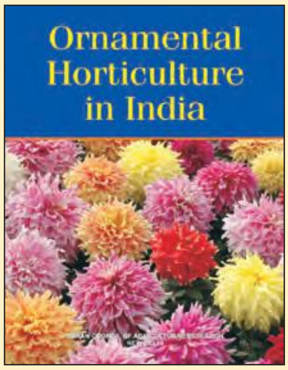

संपर्क

व्यवसाय प्रबंधक

कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

कृषि अनुसंधान भवन-I, पूसा, नई दिल्ली 110 012

टेलीफैक्स : 91-11-25843657; ई-मेल : bmicar@icar.org.in

वेबसाइट : www.icar.org.in

डा. एस. के. सिंह, परियोजना निदेशक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित तथा मैसर्स चन्दु प्रेस, 469, पटपड़गंज इंडस्ट्रियल एस्टेट, दिल्ली 110 092 से मुद्रित। सम्पादक: अशोक सिंह